Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/20-22
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th February2020
Date of posting 15th & 20th February 2020
Total Page 52

फरवरी 2020 • वर्ष 32 • अंक 02 • मूल्य ₹ 40

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

दहशत का पर्याय बनते वायरस (कोरोना वायरस)

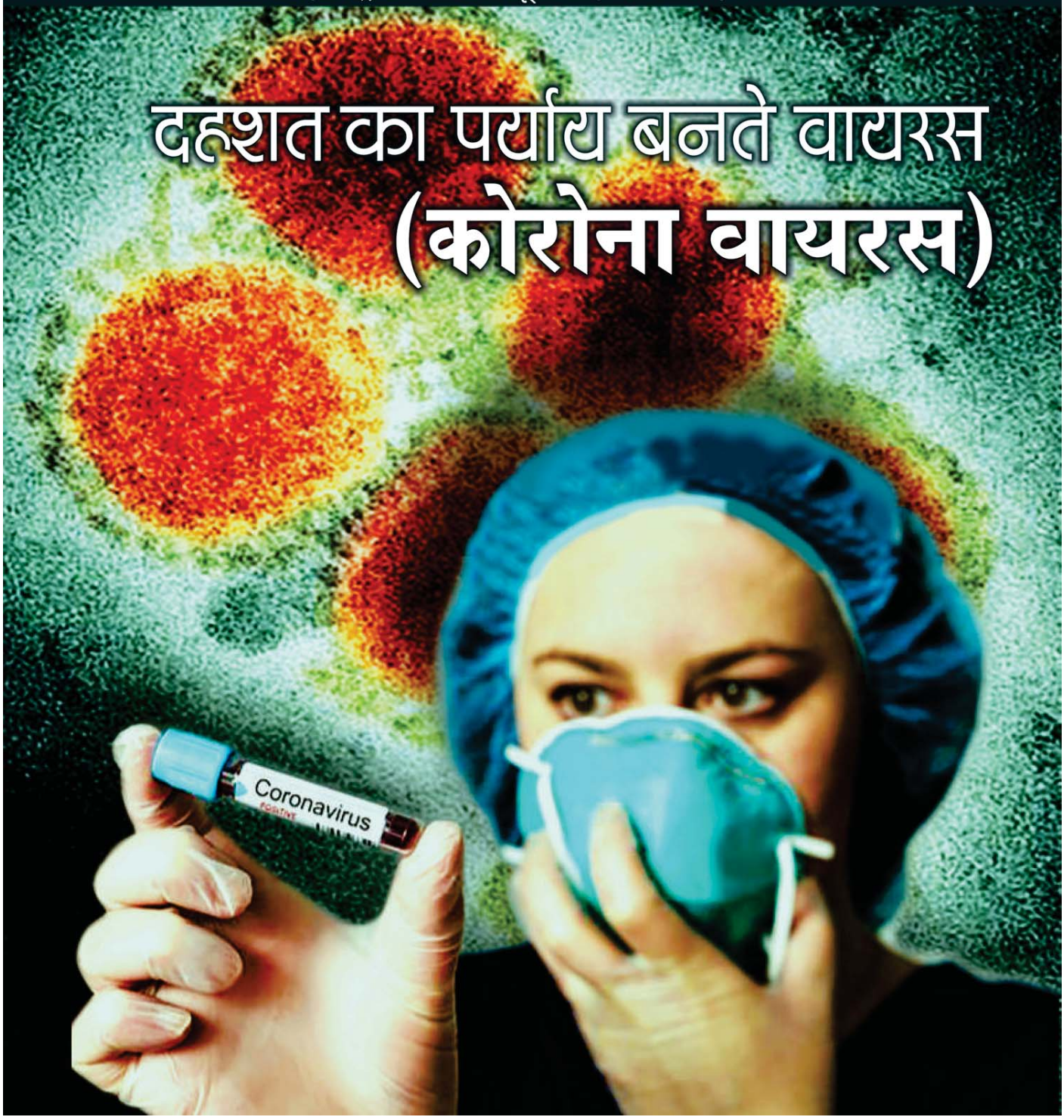

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
फरवरी 2020
वर्ष 32
अंक 2

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका
राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, डॉ. मनोज कुमार पटैरिया,
डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे,
डॉ. अशोक कुमार ग्वाल, डॉ. आर.एन.यादव, डॉ. सुनील कुमार श्रीवास्तव,
प्रो. राकेश कुमार पाण्डेय, प्रो. अमिताभ सक्सेना

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
विनीता चौबे

उप-संपादक
पुष्पा असिवाल

सह-संपादक
मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

संस्थागत सहयोग
गौरव शुक्ला, डॉ. डी.एस.राघव, डॉ. विजय सिंह, डॉ. सीतेश सिन्हा,
रवि चतुर्वेदी, डॉ. मुनीष गोविंद, डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे,
संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक
शलभ नेपालिया, शैलेष बंसल, बिनीस कुमार, अमिताभ गांगुली,
लियाक़त अली खोखर, मुदस्सर कर, नरेन्द्र कुमार, दलजीत सिंह,
आबिद हुसैन भट्ट, रजत चतुर्वेदी, संदीप रंजन, अंबरीष कुमार,
अनूप श्रीवास्तव, अजीत चतुर्वेदी, इंद्रनील मुखर्जी, राजेश शुक्ला,
निशांत श्रीवास्तव, शशिकांत वर्मा, सुशांत चक्रवर्ती

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
राहुल चतुर्वेदी, भुवनेश्वर प्रसाद द्विवेदी, सुनिल शुक्ला, प्रशांत मैथली,
अमृतेष कुमार, असीम सरकार, संतोष उपाध्याय, राजेश कुमार गुप्ता,
राजीव चौबे, महेश प्रसाद नामदेव, मनोज शर्मा, आर.के. भारद्वाज,
मनीष खरे, जितेन्द्र पांडे, गीतिका चतुर्वेदी, दीपक पाटीदार, भारत चतुर्वेदी,
रक्शी मसूद, वेद प्रकाश परोहा, अमृतराज निगम, अशोक कुमार बारी,
प्रवीण तिवारी, सूर्य प्रकाश तिवारी, रूपेश देवांगन, अभिषेक अवस्थी,
योगेश मिश्रा, अरुण साहू, सचिन जैन, विजय श्रीवास्तव, रंजीत कुमार साहू,

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा

आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

निकोलस कोपर्निकस के दो हजार वर्ष पूर्व ऐतरेय ब्रह्मांड की यह उक्ति आश्चर्यजनक है कि सूर्य कभी डूबता या उगता नहीं। वस्तुतः वह कभी अस्त नहीं होता। जो यह जानता है कि सूर्य कभी डूबता नहीं वह सूर्य के स्वरूप के साथ आनंद प्राप्त करता है और उसी लोक में निवास करता है।

-सर एम. मॉनियर विलियम्स

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 307

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

क्रम

विशेष

लो, आ गया वसंत
● देवेन्द्र मेवाड़ी /05

सामयिक

करोना वायरस के जाल में फँसते लोग
● विजन कुमार पाण्डेय /08

दहशत का पर्याय बनते : वायरस
● प्रमोद भार्गव /11

अंतरिक्ष

जी सैट-30 संचार उपग्रह का सफल प्रमोचन
● कालीशंकर /15

व्योममित्रा : प्रथम भारतीय अंतरिक्ष रोबोट
● शुभ्रता मिश्रा /18

विज्ञान आलेख

भारी धातुएँ और मृदा प्रदूषण
● डॉ.दिनेश मणि /20

ब्रह्मांड की उत्पत्ति : कब और कैसे
● प्रदीप /25

तकनीक

आईओटी : धारदार होगी डिजिटल जमाने की जिंदगी
● शंभु सुमन /29

एम लार्निंग : शिक्षा का अ-संस्थानीकरण
● कुणाल सिंह /32

इलेक्ट्रॉन त्वरक
● डॉ.कुलवंत सिंह /35

कॅरियर

माइक्रोबायोलॉजी
● संजय गोस्वामी /41

विज्ञान इस माह

जब आकाश से ओझल हो जाएगा मंगल!
● इरफॉन ह्यूमन /45

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-2700466 (डेस्क), 2700400 (रिसेप्शन)

e-mail : electronikiaisect@gmail.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

लो, आ गया वसंत

देवेन्द्र मेवाड़ी

देवेंद्र मेवाड़ी भारत के एक प्रतिष्ठित और लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं। उनके लिए विज्ञान लेखन एक मिशन है। विगत पचास वर्षों से भी अधिक समय से वह हिंदी में लोकप्रिय विज्ञान लेखन करते आ रहे हैं। वैज्ञानिक विषयों पर देश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन करते हुए मेवाड़ी जी के अभी तक 2500 से अधिक लेख तथा 30 मौलिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। विज्ञान लोकप्रियकरण का एक मुख्य उद्देश्य समाज से अंधविश्वास और रुढ़ियों का उन्मूलन करना है जिसे देवेन्द्र मेवाड़ी अपने विज्ञान लेखन और विज्ञान संचार से पूरा कर रहे हैं। वे दिल्ली में रहते हैं और विज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने के लिए वे देशभर में भ्रमण करते हैं। विद्यार्थियों के बीच वे बहुत लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं।

दोस्तो, इस मौसम में आपने देखा अपने आस-पास? सब कुछ बदला-बदला सा लगने लगा है। है ना? कहाँ गई वह दाँतों को किटकिटाने और शरीर को कंपकंपा देने वाली कड़ाके की सर्दी? वे सिहरा देने वाली ठंडी हवाएँ? अब तो गुनगुनी हवा बहने लगी है। फुलवारियों में रंग-बिरंगे फूल खिल गए हैं। उन पर रंग-बिरंगी तितलियां, भौंरे, मधुमक्खियाँ और कई कीट-पतंगे मंडराने लगे हैं। फूलों में मधु-रस भर गया है। उनसे भीनी-भीनी खुशबू आने लगी है।

आम के पेड़ों में बौर खिल गई है। दोस्तों ऐसी ही खिली बौर को देख कर महाप्राण निराला ने यह पंक्तियाँ लिखी होंगी:

फूटे हैं आमों में बौर, भौंर वन-वन टूटे हैं
होली मची ठौर-ठौर, सभी बंधन छूटे हैं

उधर अमराइयों में बौर खिलती है और इधर होली की धूम मच जाती है। सभी लोग अबीर-गुलाल लेकर दोस्तों से मिलने निकल पड़ते हैं। पिचकारी चला कर आपस में एक-दूसरे को रंगों से सराबोर कर देते हैं। है ना?

और, यह कुहू-कुहू की मधुर आवाज कहाँ से आने लगी? वहाँ उस अमराई के हरे-भरे आम के पेड़ों से। निराला जी तभी तो यह भी लिख गए हैं: कुंज-कुंज कोयल बोली है, स्वर की मादकता घोली है!" वहाँ पेड़ों पर बैठी कोयल गा रही है। यहाँ लोग होली की फाग गा रहे हैं। अरे, सामने तो देखिए, वहाँ दूर तक खेतों पर जैसे किसी ने सरसों के पीले फूलों की लंबी चादर बिछा दी है। और, वहाँ ऊपर साफ नीले आसमान में उत्तर दिशा की ओर उड़ते पंछियों की कतार दिखाई दे रही है। वे प्रवासी पक्षी हैं। सर्दियां बिता कर सुदूर ठंडे प्रदेशों में अपने घर-घोंसलों की ओर लौट रहे हैं।

बात यह है कि मौसम ने अंगड़ाई ले ली है। ऋतु बदल गई है। यानी, हुआ शीत ऋतु का अंत और लो, आ गया वसंत! ऋतुराज वसंत। माघ माह की पंचमी को मनाया जाता है वसंत पंचमी का त्योहार। उस दिन लोग रूमालों को पीले रंग में रंगते हैं। वसंत पंचमी का दिन मां सरस्वती का दिन माना जाता है जो विद्या यानी ज्ञान की देवी है। इसलिए कई लोग इस दिन से छोटे बच्चों को लिखने-पढ़ने की दीक्षा देते हैं।

वसंत के आने की आहट सुन कर पेड़-पौधों की सोई हुई कलियां जाग उठी हैं। ठिठुरती सर्दी में समाधि लगाए, पत्तों से विहीन पेड़ भी जाग उठे हैं। उन पर नई हरी-तांबई, कोमल, चिकनी पत्तियां निकलने लगी हैं। दिन में सूरज की किरणों से वे कैसी दिप-दिप चमकने लगती हैं। और हां, वसंत आ गया है जान कर कचनार भी जैसे खिल कर खिलखिला उठा है। उसके सफेद, गुलाबी फूल सभी का मन मोह लेते हैं। गांवों के आसपास टेसू यानी पलाश खिल उठे हैं। सिंदूरी रंग के चमकीले फूलों से सजे-धजे टेसू दूर से आग की लपटों की तरह दिखाई देने लगे हैं। तभी तो इन्हें 'जंगल की ज्वाला' कहा जाता है। ढाक भी इन्हें ही कहा जाता है। पत्ती के तीन भाग होने के कारण मुहावरा भी

बन गया है- ढाक के तीन पात! वैसे इन्हें किंशुक भी कहा जाता है क्योंकि इनके फूल किंशुक यानी तोते की चौंच जैसे दिखाई देते हैं!

पलाश की बात करते-करते मुझे मध्य प्रदेश में होशंगाबाद मार्ग और आईसेक्ट यूनिवर्सिटी (अब टैगोर यूनिवर्सिटी) के सामने की सड़क के किनारे खूब खिले हुए पलाश याद आ गए हैं। कुछ साल पहले जब मैं भोजपुर से लौट रहा था तो मुझे एक युवा पलाश मिला था। मैंने अपनी डायरी में लिखा है- 'गेहूँ के विस्तृत खेतों पर आसमान से सूरज की तिरछी किरणें पड़ रही थीं। आगे बढ़ ही रहा था कि राह से थोड़ा नीचे खड़े पलाश के तन-मन से खिले युवा पेड़ ने बुला लिया। मिला उससे। तोते की चोंच जैसे नारंगी रंग के फूलों से लदी शाखों पर चमकीले जामुनी रंग का नर और धानी हरे रंग की मादा सन बर्ड चहक रही थी। मैं पेड़ के पास पहुँचा तो वे चहकती हुई उड़ कर दूसरे पेड़ पर चली गईं। मैंने उस युवा पेड़ का तना सहलाया तो लगा जैसे मेरे पूरे मन-आंगन में पलाश के फूल खिल उठे हों।....

आसमान से धीरे-धीरे शाम उतरने लगी थी। पक्षी अपने नीड़ों की ओर लौट रहे थे। मैं भी आईसेक्ट यूनिवर्सिटी के अतिथि गृह में अपने नीड़ की ओर लौट चला। सुबह तैयार होकर मैं तेजी से उस पार पलाश के पेड से मिलने गया। रोड पर डामर बिछाया जा रहा था। मैं किनारे-किनारे आगे बढ़ा और कल के देखे पलाश के पास पहुँचा। वह आज कुछ और अधिक खिल चुका था। पेड़ के नीचे और पीछे गेहूँ के खेत की मेंड़ पर भी कुछ पुराने फूल गिरे हुए थे। मैंने मन ही मन पलाश से कुछ देर तक बातें कीं। उसके फोटो खींचने लगा तो वह खुश हो गया। लगा, शाखों पर जैसे फूल मुस्कुरा उठे।'

इन दिनों शहर के बड़े पार्कों में शाल्मली यानी सेमल के ऊँचे पेड़ों पर फूलों की कलियां भी खिलने लगी होंगी। शाखों पर लाल-नारंगी रंग के मांसल फूल खिल उठे होंगे। उन पेड़ों पर पंछियों की चहचहाहट भी बढ़ गई होगी। वहीं कहीं शाखों के सिरों पर अंगुलियों जैसे लाल फूलों से सजे 'इंडियन कोरल ट्री' यानी पांगरी के सुंदर पेड़ दिखाई देंगे। जल्दी ही कहीं जैकरेंडा यानी नीला गुलमोहर मनमोहक नीले फूलों से ढक जाएगा। दूर से उसे देख कर आपको लगेगा जैसे बिना पत्तियों के उस पेड़ पर कोई नीला बादल आकर बैठ गया है!

कहीं किसी किनारे पर झुकी-झुकी शाखों वाले बॉटल ब्रश के पेड़ों पर बोतल साफ करने के ब्रुश जैसे लंबे फूल खिल जाएंगे। और हाँ, घरों के आसपास खड़े नीम के पेड़ों पर भी नजर डालते रहिएगा। जब वसंत ऋतु में खिलने वाले तमाम फूल खिल जाएंगे और मौसम गर्म होने लगेगा तो नीम के पेड़ अपनी पत्तियां गिरा देंगे। और फिर, उन पर नन्हे-नन्हे सफेद फूल खिल जाएंगे। हवा चलेगी और नीम के उन नन्हे फूलों की भीनी-भीनी खुशबू चारों ओर फैल जाएगी।

शहर के बड़े पार्कों में शाल्मली यानी सेमल के ऊंचे पेड़ों पर फूलों की कलियां भी खिलने लगी होंगी। शाखों पर लाल-नारंगी रंग के मांसल फूल खिल उठे होंगे। उन पेड़ों पर पंछियों की चहचहाहट भी बढ़ गई होगी। वहीं कहीं शाखों के सिरों पर अंगुलियों जैसे लाल फूलों से सजे 'इंडियन कोरल ट्री' यानी पांगरी के सुंदर पेड़ दिखाई देंगे। जल्दी ही कहीं जैकरेंडा यानी नीला गुलमोहर मनमोहक नीले फूलों से ढक जाएगा। दूर से उसे देख कर आपको लगेगा जैसे बिना पत्तियों के उस पेड़ पर कोई नीला बादल आकर बैठ गया है!

फुलवारियों में गेंदा, डहेलिया, पिटूनिया, पेंसी, डाएंथस, डेल्फीनियम, नेस्टरशियम, हॉलीहॉक, कॉस्मास और कलेंडुला के फूल खिल गए होंगे। जल्दी ही गंधराज और बेला के फूल अपनी खुशबू बिखेरने लगेंगे।

लेकिन, यह क्या? फूलों में यह खुशबू, यह सुरभि कहाँ से आई और क्यों? यह जानने से पहले आइए महादेवी वर्मा की यह प्यारी कविता 'ऋतुओं में न्यारा वसंत' पढ़ते हैं-

'स्वप्न से किसने जगाया? मैं सुरभि हूँ
छोड़ कोमल फूल का घर ढूंढती हूँ कुंज निर्झर
पूछती हूँ नभ धरा से
क्या नहीं ऋतुराज आया?'

ऋतुराज वसंत आ गया है। तभी तो फुलवारियों में सुगंध छा गई है!

भौंरों का गुन-गुन गुंजन सुन कर बरबस ही द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी का वसंत गीत याद आ जाता है :

गुन-गुन-गुन भौंरे गूँज रहे
सुमनों-सुमनों पर घूम रहे
अपने मधु गुंजन से कहते
छाया वसंत का राग री
मां! यह वसंत ऋतुराज री!"

जानते हैं, ऋतुराज वसंत आने पर इतने रंग-बिरंगे फूल क्यों खिल जाते हैं? वे रंगीन क्यों होते हैं? क्यों उनमें खुशबू होती है और क्यों मधुरस भरा रहता है? इन सभी सवालों का एक ही जवाब है- कीट-पतंगों को आकर्षित करने के लिए। असल में वसंत फूलों के शादी-विवाह का मौसम है। फूल खिलते हैं। उनमें पराग बनता है। उस पराग से फूलों में कीट-पतंगे परागण कराते हैं यानी ब्याह रचाते हैं और फिर बीज बनते हैं। वे उगते हैं, बढ़ते हैं और बड़े होकर खूब खिलते हैं। उनके फूलों से फिर नए बीज बन जाते हैं।

और रंग? रंग कौन भरता है फूलों की पंखुड़ियों में? फूलों पर काम करने वाले विज्ञानी बताते हैं कि फूलों में रंग रंगरेज रसायन भरते हैं। इन रसायनों का नाम है- एंथोसाएनिन और एंथोजेंथिन। जैसे रंगरेज हमारे कपड़ों को रंग देते हैं वैसे ही इन रसायनों के कारण फूल लाल, गुलाबी, नीले, पीले या बहुरंगी होते हैं।

वसंत आता है और तरह-तरह की रंग-बिरंगी तितलियां आकर फूलों पर मंडराने लगती हैं। कहाँ से आती हैं वे? आसपास खड़े पेड़-पौधों की टहनियों, पत्थरों, कोटरों और दीवारों से! वहाँ कहाँ से आती हैं? वहाँ लटके प्यूपाओं से। बात यह है कि तितलियां जब अंडे देती हैं तो उनसे लार्वा बन जाते हैं। पत्तियों पर लप-लप चलते, पत्तियों को कुतरते, भकोसते लार्वा आपने देखे होंगे। खूब खा-खा कर वे पेड़ों की टहनियों, खोहों, दीवारों से लटक कर प्यूपा के जिरहबख्तर में बंद हो जाते हैं। वसंत आने पर उनके भीतर चुपचाप तितली बन जाती है।

वसंत आता है और तितलियां प्यूपा का कड़ा जिरहबख्तर तोड़ कर बाहर निकल आती हैं। बाहर निकल कर अपने पंख सुखाती हैं। फिर पंख फटफटा कर हवा में उड़ान भरती हैं। उड़ान भर कर रंग-बिरंगे फूलों पर मंडराने लगती हैं। उनका रस चूसती हैं और पराग बिखरा कर फूलों का ब्याह रचाती हैं।

यह तो रही फूलों, तितलियों, पेड़ों और कलियों की बात। लेकिन, आसमान में कतार में उड़ते वे पंछी कहाँ जा रहे हैं? ताल-पोखरों, झीलों, नदियों के किनारे और दलदलों में सर्दियों में आए मेहमान पंछी भी अब ठंडे इलाकों में अपने घरों की ओर लौट रहे हैं या लौटने की तैयारी कर रहे हैं- हंस, सारस, चकवा-चकवी, मैनाएं, पेंटेड स्टार्क, स्पून बिल, मुर्गाबियां, जलकव्वे सभी।

सर्दियों में तो कीट-पतंगों की आवाज भी नहीं सुनाई दे रही थी। अब टिड्डे और झींगुर-झिल्लियां झंकारने लगी हैं। सर्दियों में कड़ाके की ठंड से बचने के लिए पेड़ों की कोटरों, खोहों और बिलों में सोए जीव-जंतु भी जागने लगे हैं। मौसम की गरमाहट पाकर अब सांप-कीड़ों की भी नींद खुल जाएगी। ठंड के कारण अपने बिल में सोई गिलहरियां अब पेड़ों के आसपास चुक्क....चुक्क.....चुक्क की तेज आवाज निकाल कर धमा-चौकड़ी मचाने लगी हैं। उन्हें भी पता लग गया है कि वसंत आ गया है।

मैं जब बच्चा था तो मेरे गांव में वसंत ऋतु आती थी। चारों ओर पहाड़ों पर फैले घने वनों में बुरोंश के लाल-लाल फूल खिल जाते। लगता था जैसे उन वनों पर प्रकृति मां ने अपनी कूंची से लाल रंग भर दिया है। बुरोंश के उन फूलों में खूब मीठा रस होता था। हम बच्चे और मधुमक्खियां उनका रस चूसते थे। वसंत आया जान कर प्योंली के पीले फूल भी खिल जाते थे। हमारी क्यारियों में हजारी यानी गेंदा के फूल खिलते। बच्चे फूलों का त्यौहार 'फूलदेई' मनाते थे। वे घर-घर जाकर हर घर की देहरी पर फूल चढ़ाते। वहाँ पहाड़ों और घाटियों में खूब फूल खिलते थे।

मैं जब बच्चा था तो मेरे गांव में वसंत ऋतु आती थी। चारों ओर पहाड़ों पर फैले घने वनों में बुरोंश के लाल-लाल फूल खिल जाते। लगता था जैसे उन वनों पर प्रकृति मां ने अपनी कूंची से लाल रंग भर दिया है। बुरोंश के उन फूलों में खूब मीठा रस होता था। हम बच्चे और मधुमक्खियां उनका रस चूसते थे। वसंत आया जान कर प्योंली के पीले फूल भी खिल जाते थे। हमारी क्यारियों में हजारी यानी गेंदा के फूल खिलते। बच्चे फूलों का त्यौहार 'फूलदेई' मनाते थे। वे घर-घर जाकर हर घर की देहरी पर फूल चढ़ाते। वहाँ पहाड़ों और घाटियों में खूब फूल खिलते थे। शायद फूलों खिली वैसी ही किसी घाटी को देख कर ही तो प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानंदन पंत ने लिखा होगाः

लो, चित्र-शलभ सी पंख खोल
उड़ने को है कुसुमित घाटी
यह है अल्मोड़े का वसंत
खिल पड़ी निखिल पर्वत घाटी!

साथियो, लो आ गया वसंत। आप भी वसंत के फूलों की तरह खूब खिलें और खिलखिलाएं।

dmewari@yahoo.com

बजरंग लाल जेठू का जन्म 10 अगस्त 1958 को हुआ। आपने एम.एस-सी एमएड तक शिक्षा प्राप्त की। आपकी चर्चित कृतियों में मरू-प्रदेश की वनस्पतियाँ, हमारे वृक्ष, जल एवं वायु के पर्यावरणीय संप्रत्यय, ठोस अपशिष्ट के पर्यावरणीय पक्ष, हमारी जन परंपराएं, हमारी जल संस्कृति के विलुप्त होते अध्याय, पर्यावरण त्रयी, हमारी जल परम्पराएं, प्रारंभिक जैव-प्रौद्योगिकी, माध्यमिक जैव-प्रौद्योगिकी, परिचयात्मक जैव प्रौद्योगिकी, विद्युत उत्पादन की पर्यावरण-मित्र तकनीकें, आपदा विज्ञान एवं आपदा-प्रबंधन, राजपूत की बेटी, थारी म्यारी एवं कहवतां किकर चाली (राजस्थान) शामिल हैं। मेदनी पुरस्कार, मेघनाथ साहा पुरस्कार, जगदीश चंद्र बोस हिन्दी लेखन पुरस्कार, हिन्दी सेवी पुरस्कार आदि से नवाजे गये बजरंगलाल जेठू की यह पुस्तक सागर की जुबानी है जो अपने प्रवाह, धारा, चक्र, मानसून, सुनामी, अलनिनो, जीवजगत्-वनस्पति व जन्तु, समुद्री घास, मैन्ग्रोव, शैवाल, नमक, पेट्रोलियम, मूंगा आदि के बारे स्वयं बोलता है। बोलते-बोलते सागर उदास हो जाता है जब हम उसमें हर तरह का कचरा और गंदगी दफनाते हैं।

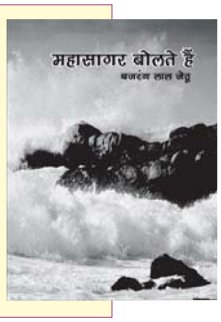

सामयिक

कोरोना वायरस के जाल में फँसते लोग

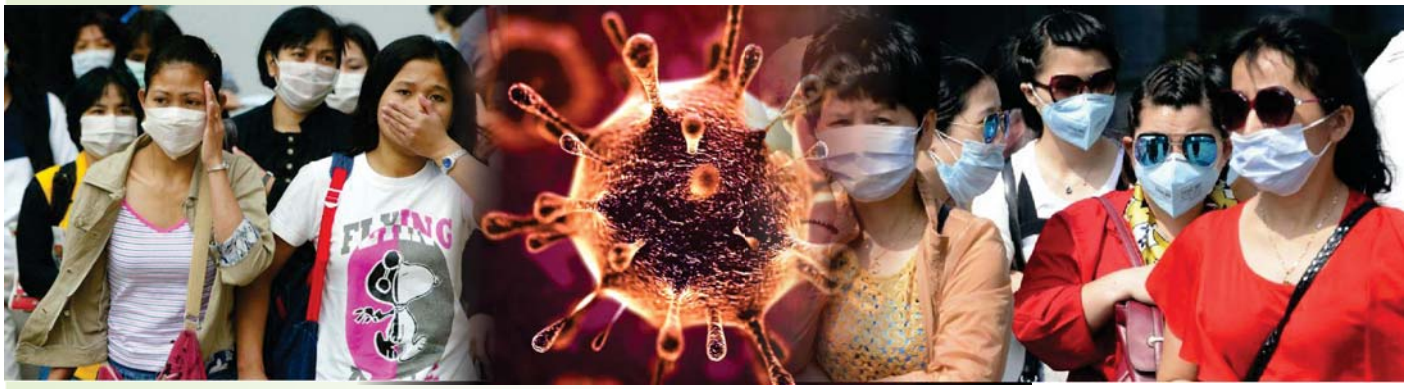

विजन कुमार पांडेय

विजन कुमार पाण्डेय लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं और शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े हैं। उन्होंने विगत तीन दशकों में तीन सौ से अधिक लेख लिखे हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में वे नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे हैं। देश के प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिकाओं में आपकी रचनाओं की कई-कई पाठक हैं जो आपके काम को रेखांकित करते रहते हैं।

चीन में इस साल नए साल के जश्न को कोरोना वायरस ने गम में बदल दिया है। वुहान में हजारों विदेशी नागरिक फँस गए हैं। इनमें से कई अमेरिका, जापान जैसे विकसित देशों के हैं। ये देश अपने नागरिकों को चीन से बाहर निकालने की पुरजोर कोशिश कर रहे हैं। वहीं वुहान में शोध के छात्र अपने अफ्रीकी साथियों के साथ वुहान शहर से निकलने की योजना बना रहे हैं। चीन के शिक्षा मंत्रालय के मुताबिक अफ्रीकी महाद्वीप के छात्र चीन में बड़ी संख्या में पढ़ने आते हैं। 2018 में अफ्रीकी छात्रों की संख्या करीब 80 हजार थी। अकेले वुहान में चार हजार से ज्यादा अफ्रीकी छात्र हैं। किसी को पता नहीं कि प्रशासन वुहान शहर को कब तक बंद रखेगा। चीन ने अपने विश्वविद्यालय के छात्रों को निर्देशों का पालन करने के लिए कहा है। प्रशासन ने चेतावनी दी है कि बिना अनुमति चीन छोड़ने के दूरगामी परिणाम हो सकते हैं। वैसे वुहान विश्वलिद्यालय में किसी भी विदेशी छात्र को वायरस होने की शिकायत नहीं मिली है। विश्वविद्यालय के प्रशासन ने छात्रों को चीन के मशहूर मैसेजिंग ऐप वीचैट पर कोरोना वायरस से संबंधित किसी भी संदेश, वीडियो को भेजने से मना किया है। ऐसा करने पर वाई-फाई कनेक्शन को काटने की चेतावनी भी दी गई है।

भारत में भी इस खतरे की आहट सुनाई देने लगी है। भारत की स्वास्थ्य सेवा प्रणाली आज दोहरी चुनौती का सामना कर रही है। देश के भीतर बीमारियों के पैटर्न में भी बदलाव आया है - संक्रामक रोग, जच्चा-बच्चा संबंधित रोग, नवजात विकार रोगों और पोषण संबंधी बीमारियों के कारण मृत्यु दर में काफ़ी गिरावट आई है। जबकि ग़ैर-संक्रामक रोगों और चोटों से जुड़े मामलों से मृत्यु दर बढ़ने से पूरी चिकित्सा व्यवस्था पर बोझ बढ़ गया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने हाल ही में उन बीमारियों और खतरों की सूची जारी की है जो 2019-20 में दुनिया को संभावित स्वास्थ्य संकट में डाल सकती हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा सुझाए गये इन खतरों के कारण वह एक नई पंच वर्षीय योजना की शुरुआत करने जा रहा है। डब्ल्यूएचओ का कहना है कि यदि इन संभावित खतरों से नहीं निपटा गया तो स्वास्थ्य संबंधित गंभीर खतरे उत्पन्न हो सकते हैं। डब्ल्यूएचओ ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि दुनिया भर में 10 में से 9 लोग प्रदूषित हवा में सांस ले रहे हैं। वायु प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन सबसे गंभीर खतरे हैं। वायु प्रदूषण के कारण विश्व में समय से पहले होने वाली मौतों की तुलना में भारत में लगभग 26% अधिक मौतें हो रही हैं। रिपोर्ट के अनुसार 2030 से 2050 के बीच जलवायु परिवर्तन के कारण सामान्य की तुलना में 2,50,000 अधिक लोगों की मृत्यु होगी। भारत को 'दुनिया की मधुमेह राजधानी' कहा गया है। विश्व भर में 30 से 69 वर्ष के 15 मिलियन लोग प्रतिवर्ष गैर-संक्रामक रोगों के कारण अपनी जान गंवाते हैं। दुनिया भर में 70% से अधिक मौतें (41 मिलियन) गैर-संक्रामक रोगों, जैसे-मधुमेह, कैंसर और हृदय रोग की वज़ह से हो रही है। भारत में वर्तमान में अनुमानित कैंसर रोगियों की संख्या आने वाले 20 वर्षों में लगभग दोगुनी हो जाएगी। डब्ल्यूएचओ के अनुसार विश्व को एक और इन्फ्लूएंजा महामारी का सामना करना पड़ सकता है। गौरतलब है कि 13 जनवरी, 2019 तक भारत में स्वाइन फ्लू के कुल 1,694 मामले सामने आए, जिसमें 49 लोगों की मृत्यु हो गईं। वर्ष 2018 में कुल 14,992 मामले

सामने आए, जबकि कुल 1,103 लोगों की मृत्यु हुई। विश्व भर में 1.6 बिलियन से अधिक लोगों को जो कि वैश्विक आबादी का 22% है, खराब स्वास्थ्य सेवाओं जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट के अनुसार, प्रत्येक वर्ष एचआईवी के कारण दस लाख लोगों की मौत हो जाती है। इस महामारी की शुरुआत के बाद से 70 मिलियन से अधिक लोग इस संक्रमण के शिकार हुए हैं, जबकि लगभग 35 मिलियन लोगों की मृत्यु हो चुकी है। वर्तमान में विश्व भर में लगभग 37 मिलियन लोग इससे ग्रस्त हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने उन बीमारियों की पहचान की है जिनमें सार्वजनिक स्वास्थ्य आपातकाल पैदा करने की क्षमता है। लेकिन उनके भी प्रभावी उपचार और टीकों की कमी है। इस सूची में इबोला, ज़ीका, निपा, मध्य-पूर्व श्वसन सिंड्रोम कोरोना वायरस (MERS-CoV) और गंभीर एक्यूट रेस्पिरेटरी सिंड्रोम (SARS) शामिल हैं, जो किसी अज्ञात महामारी हेतु तैयार रहने के लिये आगाह करते हैं। ऐसी बीमारियाँ भविष्य में किसी गंभीर महामारी का कारण बन सकती हैं।

कोरोना वायरस से सहमें लोग

कोरोना वायरस को लेकर लोगों में दहशत है। यह इंसानों से इंसानों में फैलता है। इसलिए लोग डरे हुए हैं। ऐसा माना जा रहा है कि इस वायरस के संक्रमण की शुरुआत चीन के वुहान शहर से हुई है। इस वायरस की वजह से चीन के लोगों में भी दहशत का माहौल है। एक करोड़ से ज़्यादा लोगों की आबादी वाला चीन का वुहान शहर फिलहाल एक तरह से बंद है। यहाँ के सार्वजनिक यातायात को फिलहाल बंद कर दिया गया है। शहर के लोगों को सलाह दी गई है कि वो अपना शहर ना छोड़ें। हालांकि जेनेवा में विश्व स्वास्थ्य संगठन की बैठक में इसे अभी तक अंतरराष्ट्रीय आपातकाल नहीं घोषित किया है। दरअसल इस वायरस के लिए अभी तक कोई वैक्सीन तैयार नहीं की गई है। सावधानी के तौर पर संक्रमित लोगों से दूर रहने को कहा गया है। यह वायरस मर्स और सार्स वायरस की तरह जानवरों से ही आया है। दस से बीस दिनों के भीतर ही यह वायरस 550 लोगों को संक्रमित कर चुका है। जो वायरस अब तक चीन तक ही सीमित था वो अब अन्य देशों तक भी पहुँच चुका है। वैसे कोरोना वायरस कई तरह के होते हैं लेकिन इनमें से केवल छह ही लोगों को संक्रमित करते हैं। यह सातवां नया वायरस है जो लोगों को परेशान किए है। ये वायरस जीवों की एक प्रजाति से दूसरे प्रजाति में जाते हैं और फिर इंसानों को संक्रमित कर लेते हैं। इस दौरान इनका बिल्कुल पता नहीं चल पाता। यह बिल्कुल ही नई तरह का वायरस है। बहुत हद तक संभव है कि पशुओं से ही इंसानों तक पहुंचा हो। कोरोना वायरस के कारण अमूमन संक्रमित लोगों में सर्दी-ज़ुक़ाम के लक्षण नज़र आते हैं लेकिन असर गंभीर हों तो मौत भी हो सकती है।

इस वायरस के लिए अभी तक कोई वैक्सीन तैयार नहीं की गई है। सावधानी के तौर पर संक्रमित लोगों से दूर रहने को कहा गया है। यह वायरस मर्स और सार्स वायरस की तरह जानवरों से ही आया है। दस से बीस दिनों के भीतर ही यह वायरस 550 लोगों को संक्रमित कर चुका है। जो वायरस अब तक चीन तक ही सीमित था वो अब अन्य देशों तक भी पहुँच चुका है। वैसे कोरोना वायरस कई तरह के होते हैं लेकिन इनमें से केवल छह ही लोगों को संक्रमित करते हैं। यह सातवां नया वायरस है जो लोगों को परेशान किए है। ये वायरस जीवों की एक प्रजाति से दूसरे प्रजाति में जाते हैं और फिर इंसानों को संक्रमित कर लेते हैं। इस दौरान इनका बिल्कुल पता नहीं चल पाता।

विशेषज्ञों ने हाल ही में कोरोनो वायरस के जीन अनुक्रम को डिकोड किया जिसे 2019-एनसीओवी का नाम दिया गया है। नए वायरस के जेनेटिक कोड के विश्लेषण से यह पता चलता है कि यह 'सार्स' वायरस की तरह ही है। सार्स से कोरोना वायरस को ज्यादा ख़तरनाक माना जा रहा है। सार्स के कारण चीन में साल 2002 में 8,098 लोग संक्रमित हुए थे और उनमें से 774 लोगों की मौत हो गई थी। सार्स का वायरस बिल्ली जाति के एक जीव से इंसानों तक पहुँचा था। हालांकि चीन की ओर से अभी तक इस मूल स्रोत के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है। यह वायरस अमेरिका तक पहुँच चुका है। हमारे देश के लोग भी चीन की यात्रा करते हैं। इस समय क़रीब 1200 मेडिकल स्टूडेंट चीन में पढ़ाई कर रहे हैं। जिसमें से ज़्यादातर वुहान प्रांत में ही हैं।

जैसा कि हर बीमारी के लिए कहा जाता है कि इलाज से बेहतर है सावधानी। ऐसे में हर किसी को सावधान रहने की जरूरत है। चीन की यात्रा से अभी बचें। अगर कोई वहां से आपका लौटकर आ रहा है तो उसकी जांच जरूर करवा लें। इस वायरस को लेकर सबसे बड़ा डर है कि यह सबसे पहले फेफड़े को ही प्रभावित करता है। इस वायरस का संक्रमण होते ही आपको खांसी और नज़ला की शिकायत हो जाती है। शुरुआत में माना जा रहा था कि इस वायरस का असर सीमित ही होगा लेकिन दिसंबर के बाद से कई नए मामले सामने आ चुके हैं।

हालांकि इस संक्रमण की शुरुआत चीन के वुहान शहर से हुई लेकिन अब इसका असर चीन के बाकी शहरों के साथ-साथ देश के बाहर भी नज़र आ रहा है। थाईलैंड, जापान, अमेरिका और दक्षिण कोरिया में भी संक्रमण के कुछ मामले सामने आए हैं। ऐसी आशंका है कि यह वायरस नए साल में चीन घूमने आए बहुत से लोगों के साथ अन्य देशों में भी पहुँच चुका है। जिसका असर भविष्य में देखने को मिलेगा। चीन में फैल रहे इस कोरोना वायरस को लेकर

विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक आपात कालीन बैठक भी हुई है। इस मीटिंग में चीन, जापान, कोरिया, थाईलैंड व सिंगापुर के प्रतिनिधि शामिल थे। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट में बताया गया है कि इस कोरोना वायरस से ग्रसित रोगियों में से 25% रोगियों की स्थिति गंभीर है। चीन इससे सबसे ज्यादा प्रभावित है। सिंगापुर में भी अब कोरोना वायरस का एक नया मामला सामने आया है। विश्व स्वास्थ्य संगठनके महानिदेशक टेडरोस ने इस वायरस संक्रमण के बारे में कहा कि फिलहाल अंतर्राष्ट्रीय आपातकालीन जैसी स्थिति नहीं है। चीन के लिए जरूर यह आपातकालीन स्थिति है।

संक्रमित पशु का मांस महामारी का कारण

जब इंसान संक्रमित पशु का मांस खाता है तब ऐसे वायरस फैलते हैं। जानवर के मांस को ठीक से पकाया ना गया हो या गंदी जगह में तैयार किया गया हो, तब भी यह वायरस फैल सकता है। ऐसा माना जा रहा है कि करोना वायरस इंसान और संक्रमित जानवर के बीच सीधे संपर्क या हवा के माध्यम से फैला होगा। जो वायरस इंसान और जानवरों के बीच फैलते हैं उसे "जूनोटिक" कहा जाता है। बूढ़े व्यक्तियों के लिए यह वायरस और घातक हो सकता है क्योंकि जवान लोगों की तुलना में बूढ़े लोगों में रोगों से लड़ने की क्षमता कम होती है। कोरोना वायरस से ग्रसित व्यक्ति को सिरदर्द, खांसी, गले में खराश, बुखार, लगातार छींक आना, अस्थमा का बिगड़ना, थकान महसूस होना, निमोनिया हो जाना या फेफड़ों में सूजन जैसे लक्षण हो सकते हैं। कोरोना वायरस को 1960 के दशक में पहली बार खोजा गया था। उसकी मुकुट जैसी आकृति की वजह से उसे कोरोना या क्राउन नाम दिया गया। ऐसे वायरस घातक नहीं होते हैं लेकिन कभी-कभी यह आंत से संबंधी बीमारियों को पैदा कर सकता हैं। कोरोना वायरस एक आरएनए वायरस है जो बाकि वायरस से आनुवंशिक रूप में अलग है। इस वजह से यह दो अलग प्रजातियों के बीच आसानी से फैल सकता है और उन्हें संक्रमित कर सकता है। कुछ कोरोना वायरस सामान्य सर्दी जुकाम का कारण बन सकते हैं, तो कुछ गंभीर बीमारियों को विकसित कर सकते हैं। सांस लेने में कठिनाई, निमोनिया, आंत की बीमारियां मौत का कारण भी बन जाती हैं। 2002 और 2003 में कोरोना वायरस का एक प्रकार "सार्स" 30 देशों में फैल गया था। तब दुनिया भर में आठ हजार से ज्यादा लोग सार्स से संक्रमित हो गए थे। एक हजार लोग मारे गए थे। इसी तरह 2012 में अरब देशों में मर्स यानी मिडल ईस्ट रेस्पीरेटरी सिंड्रोम जैसा कोरोना वायरस मिला था। इससे कई लोगों की जान गई थी।

इस महामारी से कैसे बचें

इससे बचने के लिए आपको खुद की साफ-सुथरा रखना होगा। आस पड़ोस की सफाई पर विशेष ध्यान देना होगा। अगर आप बाहर से आ रहे हैं या संक्रमित व्यक्ति या जंगली जानवर के संपर्क में रहे हों तो घर आकर हाथों को अच्छी तरह जरूर धो लें। हालांकि दुनिया भर के हवाई अड्डों और विशेष रूप से चीन ने यात्रियों की जांच शुरू कर दी गई है। इस वायरस को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वास्थ्य आपातकाल घोषित करने की भी मांग उठ रही है, जिसका मतलब है कि इन इलाकों में अंतरराष्ट्रीय यात्रा को सीमित कर दिया जाएगा और हवाई अड्डों पर विशेष उपचार केंद्र बना दिए जाएंगे। ऐसी स्थिति में कई देशों को आर्थिक नुकसान होने की संभावना है। करोना वायरस अर्थव्यवस्था को भी बीमार कर सकता है। इसका असर एशियाई शेयर बाजारों पर अधिक पड़ सकता है। जैसे 2002 से 2003 तक सार्स के कारण एशिया के बाजारों को भारी आर्थिक क्षति उठानी पड़ी थी जिसमें पर्यटन उद्योग प्रमुख था।

चूंकि कोरोना वायरस का प्रसार अभी शुरुआती दौर में है, इसलिए अर्थशास्त्री फ़िलहाल कोई आंकड़े देने से बच रहे हैं। बहुत ज़्यादा पुरानी बात नहीं है, साल 2002-03 के दौरान सार्स की महामारी फैली थी और इसकी भी शुरुआत चीन से ही हुई थी। फ़िलहाल इस वायरस के कारण चीन को थोड़ा आर्थिक नुक़सान हुआ है। देश के कुछ हिस्सों में यात्रा प्रतिबंध लागू हैं और वो भी ऐसे वक़्त में जब चीनी नव वर्ष का समय है जिसमें लोग बड़ी संख्या में यात्राएं करते हैं। इस लिहाज़ से चीन के पर्यटन व्यवसाय को जरूर झटका लगा है। अर्थव्यवस्था पर कोरोना वायरस का प्रभाव काफी कुछ इस बात पर भी निर्भर करेगा कि ये वायरस कितनी आसानी से और तेजी से फैलता है। इससे संक्रमित होने वाले लोगों की मौत की आशंका किस हद तक है। यहाँ अच्छी बात ये है कि इससे संक्रमित होने वाले लोगों में काफी सुधार देखा गया है। दूसरा पहलू दवा उद्योग का है। इस समय कोरोना वायरस से संक्रमित लोगों के इलाज के लिए जो बाजार में दवा उपलब्ध है, वह इसके लक्षणों से केवल राहत देने वाली दवा है। भविष्य में ये मुमकिन है कि कोरोना वायरस के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए वैक्सीन विकसित हो जाए। फिर ये दवा उद्योग के लिए मुनाफ़े का कारोबार न बन जाए। इसलिए सरकार को इस पर नजर रखनी होगी जिससे गरीब भी अपना इलाज अच्छी तरह करा सकें। कोरोना से कैसे लड़ें, इसके लिए हम सार्स महामारी जैसी घटना से सबक ले सकते हैं। एक अनुमान के मुताबिक़ सार्स महामारी के वक़्त वैश्विक अर्थ व्यवस्था को 40 अरब डॉलर का नुक़सान उठाना पड़ा था।

vijankumarpandey@gmail.com

दहशत का पर्याय बनते
वायरस

प्रमोद भार्गव

प्रमोद भार्गव एक पत्रकार और विज्ञान संचारक के रूप में देशभर में जाने जाते हैं वहीं उनका दूसरा पक्ष एक लोकप्रिय कथाकार का भी है। समकालीन परिदृश्य और समसामयिक विषयों जिनमें विज्ञान भी शामिल है, पर प्रमोद भार्गव की गहरी नज़र रहती है। वे तात्कालिक विज्ञान-अनुसंधान और हलचल पर लिखने के लिये खासे चर्चित हैं। प्रमोद भार्गव म.प्र. के शिवपुरी में निवास करते हैं।

खतरनाक विषाणु (वायरस) से इसी समय पूरी दुनिया सहमी हुई है। वायरस का प्रकोप अंकुश के तमाम प्रयासों के बावजूद बढ़ता जा रहा है, चीन के एक करोड़ से अधिक की आबादी वाले वूहान नगर में संक्रमित हुए इस वायरस के विस्तार ने चीन के अनेक शहरों में दहशत फैला दी है। यहां के करीब 24,324 लोग इसकी चपेट में हैं। 490 की मौत हो चुकी है। अनेक की हालात गंभीर है। यह विषाणु बिना किसी अवरोध के चीन की सीमा लांघ कर हांगकांग, मकाऊ, ताइवान, नेपाल, जापान, सिंगापुर, दक्षिण कोरिया, थाइलैंड, वियतनाम, फ्रांस, पाकिस्तान और अमेरिका में फैल चुका है। भारत भी इसकी दस्तक से चौकन्ना होकर सावधानी बरत रहा है, जिससे इसका संक्रमण नियंत्रित रहे। गोया, भारत में दो हजार लोगों को चिकित्सकों की निगरानी में रखा है। चीन से लौटे तीन लोगों को मुंबई के एक अस्पताल में चिकित्सीय परीक्षण किया गया, जिनमें से दो की जांच रिपोर्ट नकारात्मक है। तीसरे संदिग्ध यात्री के रक्त के नमूनों को जांच के लिए पुणे स्थित 'नेशनल इंस्ट्रीट्यूट ऑफ वायरोलॉजी' भेजी है। मुंबई में चीन से लौटने वाले 1789 और हैदराबाद में 250 यात्रियों की थर्मल स्क्रीनिंग की गई है। चीन में भारत की शिक्षिका प्रीति महेश्वरी इस संक्रमण से गंभीर रूप से पीड़ित हैं। प्रीति यहाँ के इंटरनेशनल स्कूल ऑफ सांइस एंड टेक्नॉलॉजी में शिक्षिका हैं। उनके उपचार में करीब एक करोड़ रुपए खर्च आ रहा है। वुहान में फँसे 300 से अधिक चिकित्सा शिक्षा के छात्रों को भारत सरकार विमान से लाया गया है। इसका असर चीनी अर्थव्यवस्था पर भी दिखाई दे रहा है। चीनी शेयर बाजार में गिरावट आई है। साफ है, आँख से नहीं दिखने वाला यह अत्यंत मामूली विषाणु जहाँ इंसान पर कहर बनकर टूट रहा है, वहीं आधुनिकतम चिकित्सा विज्ञान के लिए भयावह चुनौती के रूप में पेश आया है। क्योंकि इस वायरस का कोई इलाज नहीं है।

अकसर हर साल दुनिया में कहीं न कही, किसी न किसी वायरस से उत्पन्न होने वाली बीमारी का प्रकोप देखने में आ जाता है, जिस पर यदि समय रहते नियंत्रण नहीं हो पाया तो महामारी फैलने में देर नहीं लगेगी। इस नए वायरस के अवतार को जलवायु परिवर्तन, बढ़ते तापमान और दूषित होते पर्यावरण का कारक बताया जा रहा है। ऋतुचक्र में हो रहे परिवर्तन और खान-पान में आए बदलाव को भी इसके उत्सर्जन का कारण माना गया है। साफ है, प्रकृति के अंधाधुंध विकास पर टिकी यह जीवन-शैली हमें एक ऐसे अंधकूप में धकेल रही है, जहां जीवन जीने के खतरे निरंतर करीब आते दिख रहे हैं। गोया, चिकित्सा विज्ञान अपनी उपलब्धियों के चरम पर

जरूर है, लेकिन जिस तरह से नए-नए रूपों में निपाह, एड्स, हेपेटाईटिस-बी, स्वाइन-लू, बर्ड-लू और इबोला जैसी बीमारियां वायरसों के प्रकोप से सामने आ रही हैं, उससे लगता है, अंततः हम प्रकृति के प्रभुत्व के समक्ष लाचार ही हैं। इस वायरस के परिप्रेक्ष्य में आशंका यह भी है कि कहीं इन वायरसों का उत्सर्जन वैज्ञानिकों द्वारा जेनेटिकली इंजीनियरिंग से खिलवाड़ का कारण तो नहीं है? क्योंकि अनेक देश अपनी सुरक्षा के लिए घातक वायरसों का उत्पादन कर इन्हें, जैविक हथियार के रूप में इस्तेमाल की फिराक में हैं।

चीन से फैले इस नोवेल कोरोना विषाणु से फैलने वाली बीमारी के इलाज के लिए फिलहाल कोई टीका (वैक्सीन) का आविष्कार नहीं हो पाया है। हालांकि अमेरिका की सार्वजनिक स्वास्थ्य शोध एजेंसी ने कोरोना वायरस से बचाव का टीका विकसित करने पर काम शुरू कर दिया है। वर्तमान दुनिया को परेशान कर रहे इस वायरस का संबंध 'कोरोनोवाइरीडी' परिवार से है। इस परिवार के वायरस से फैलने वाली 'सार्स' (सीवियर एक्यूट रेस्पेरेटरी सिंड्रोम) बीमारी ने 2002 में 800 लोगों की जान ले ली थी। यह बीमारी चीन से शुरू हुई थी। इसके अलावा 2012 में पश्चिम एशिया में रेस्पेरेटरी सिंड्रोम कोरोनो वाइरस (मर्स) ने कोहराम मचाया था। उस समय प्रत्येक दस संक्रमित लोगों में से तीन से चार लोगों को बचाया नहीं जा सका था। इस वायरस के सिलसिले में सबसे हैरानी में डालने वाली बात

खतरनाक वायरस का उत्पादन !

प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंग ने मानव समुदाय को सुरक्षित बनाए रखने की दृष्टि से जो चेतावनियां दी हैं, उनमें एक चेतावनी जेनेटिकली इंजीनियरिंग अर्थात आनुवांशिक अभियंत्रिकी से खिलवाड़ करना भी है। आजकल खासतौर से अमेरिकी वैज्ञानिक विषाणु (वायरस) और जीवाणु (बैक्टीरिया) से प्रयोगशालाओं में छेड़छाड़ कर एक तो नए विषाणु व जीवाणुओं के उत्पादन में लगे हैं, दूसरे उनकी मूल प्रकृति में बदलाव कर उन्हें और ज्यादा सक्षम व खतरनाक बना रहे हैं। इनका उत्पादन मानव स्वास्थ्य के हित के बहाने किया जा रहा है। लेकिन ये बेकाबू हो गए तो तमाम मुश्किलों का भी सामना करना पड़ सकता है? कई देश अपनी सुरक्षा के लिए घातक वायरसों का उत्पादन कर खतरनाक जैविक हथियार भी बनाने में लग गए हैं। कोरोना वायरस के बारे में यह शंका स्वाभाविक है कि कहीं यह वायरस किसी ऐसे ही खिलवाड़ का हिस्सा तो नहीं ? गोया इनकी सुरक्षा का बड़ा सवाल मुहंबाए खड़ा है।

हॉलीवुड में ऐसी अनेक फिल्में बन चुकी हैं, जिनमें आनुवांशिक रूप से परिवर्धित किए विषाणु व जीवाणुओं के प्रकोप दिखाए गए हैं। लेकिन फिल्मों की यह परिकल्पना अब प्रयोगशालाओं की वास्तविकता में बदल गई है। 2014-15 में फैले इबोला वायरस ने ही हजारों लोगों के प्राण लील लिए थे। जबकि इबोला प्राकृतिक वायरस था। इबोला की सबसे पहले पहचान 1976 में सूड़ान और कांगों में हुई थी। अफ्रीकी देश जैरे की एक नन के रक्त की जांच करने पर एक नए विषाणु इबोला का ज्ञान हुआ था। यह नन पीले ज्वर (यलो-फीवर) से पीड़ित थी। करीब 40 साल तक शांत पड़े रहने के बाद एकाएक इस विषाणु का संक्रमण सहारा अफ्रीका में फैलना शुरू हुआ। इसके बाद इसका हमला पश्चिम अफ्रीका के इबोला में हुआ। जहाँ से यह बीमारी अन्य अफ्रीका मुल्कों में फैली। इबोला के विषाणु संक्रमित जानवर से मनुष्य में फैलते हैं। हालांकि यह महामारी में बदलता इससे पहले इसे काबू में ले लिया गया था। जब इबोला वायरस बड़ा तांडव रचने में कामयाब हो सकता है तो जेनेटिक इंजीनियार्ड वायरस तो वर्ण संकर होने के कारण भयंकर तबाही मचा सकता है? बावजूद प्रयोगशालाओं में विषाणु-जीवाणु उत्पादित करने के प्रयोग चल रहे हैं।

अमेरिका के विस्कोसिन-मेडिसन विवि के वैज्ञानिक योशिहिरो कावाओका ने स्वाइन लू के वायरस के साथ छेड़छाड़ कर उसे इतना ताकतवर बना दिया है कि मनुष्य शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकती। मसलन मानव प्रतिरक्षा तंत्र उस पर बेअसर रहेगा। यहाँ सवाल उठता है कि खतरनाक विषाणु को आखिर और खतरनाक बनाने का औचित्य क्या है? कावाओका का दावा है कि उनका प्रयोग 2009 एच-1, एन-1 विषाणु में होने वाले बदलाव पर नजर रखने के हिसाब से नए आकार में ढाला गया है। वैक्सीन में सुधार करने के लिए उन्होंने वायरस को ऐसा बना दिया है कि मानव की रोग प्रतिरोधक प्रणाली से बच निकले। मसलन रोग के विरुद्ध मनुष्य को कोई सरंक्षण हासिल नहीं है। कावाओका ने यह भी दावा किया था कि उन्होंने 2014 में रिवर्स जेनेटिक्स तकनीक का प्रयोग कर 1918 में फैले स्पेनिश लू जैसा जीवाणु बनाया है, जिसकी वजह से प्रथम विश्व युद्ध के बाद 5 करोड़ लोग मारे गए थे। पोलियो, रैबिज और चिकनपॉक्स जैसे घातक रोगों के वैक्सीन पर उल्लेखनीय काम करने वाले वैज्ञानिक स्टेनली प्लॉटकिन ने भी कावाओका के काम के औचित्य पर सवाल उठाते हुए कहा था, 'ऐसी कोई सरकार या दवा कंपनी है, जो ऐसे रोगों के विरुद्ध वैक्सीन बनाएगी जो वर्तमान में मौजूद ही नहीं हैं?

कावाओका द्वारा प्रयोगशाला में उत्पादित किए जा रहे, इन खतरनक वायरसों के बारे में रॉयल सोसायटी के पूर्व अध्यक्ष व ब्रिटिश सरकार के पूर्व विज्ञान सलाहकार लॉर्ड-मे ने भी इन प्रयोगों पर गहरी आपात्ति जताई थी। उन्होंने इन प्रयोगों को पागल करार देते हुए, यहाँ तक कहा था कि 'यह प्रक्रिया बेहद खतरनाक है और यह खतरा प्राणियों में मौजूद वायरस से नहीं, अत्याधिक महत्वाकांक्षी वैज्ञानिकों की प्रयोगशालाओं से निकलने वाले वायरसों से है।' दरअसल

विषाणु या जीवाणु में वैज्ञानिक कोई आनुवांशिक रूप से परिवर्तन करना चाहते हैं तो उन्हें ऐसे बदलाव करना चाहिए जो मानव समुदाय के साथ समस्त जीव-जगत के लिए लाभदायी हों ?

हम आए दिन नए-नए बैक्टीरिया व वायरसों के उत्पादन के बारे खबरें पढ़ते रहते हैं। हाल ही में त्वचा कैंसर के उपचार के लिए टी-वैक थैरेपी की खोज की गई है। इसके अनुसार शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को ही विकसित कर कैंसर से लड़ा जाएगा। इस सिलसिले में स्टीफन हॉकिंग सचेत किया था कि इस तरीके में बहुत जोखिम है। क्योंकि जीन को मोडीफाइड करने के दुष्प्रभावों के बारे में अभी तक वैज्ञानिक खोजें न तो बहुत अधिक विकसित हो पाई हैं और न ही उनके निष्कर्षों का सटीक परीक्षण हुआ है। उन्होंने यह भी आशंका जताई थी कि प्रयोगशालाओं में जीन परिवर्धित करके जो विषाणु-जीवाणु अस्तित्व में लाए जा रहे हैं, हो सकता है, उनके तोड़ के लिए किसी के पास एंटी-बायोटिक एवं एंटी-वायरल ड्रग्स ही न हों ?

कुछ समय पहले खबर आई थी कि जेनेटिकली इंजीनियर्ड अभियांत्रिकी से ऐसा जीवाणु तैयार कर लिया है, जो तीस गुना ज्यादा रसायनों का उत्पादन करेंगे। जीन में बदलाव करके इस जीवाणु के अस्तित्व को आकार दिया गया है। माना जा रहा है कि यह एक ऐसी खोज है, जिससे दुनिया की रसायन उत्पादन कारखानों में पूरी तरह जेनेटिकली इंजीनियर्ड बैक्टीरिया का ही उपयोग होगा। विस इंस्टीट्यूट फॉर बॉयोलॉजिकली इंस्पायर्ड इंजीनियरिंग और हावर्ड मेडिकल स्कूल के शोधकर्ताओं के दल ने यह शोध किया है। अनुवांशिकविद जॉर्ज चर्च के नेतृत्व में किए गए इस शोध के तहत बैक्टीरिया के जींस को इस तरीके से परिवर्धित किया गया, जिससे वे इच्छित मात्रा में रसायन का उत्पादन करें। बैक्टीरिया अपनी मेंटाबॉलिक प्रक्रिया के तहत रसायनों का उत्सर्जन करते हैं। यह तकनीक हालांकि नई नहीं है। लेकिन नई खोज से ऐसी तकनीक विकसित की बई है, जिससे वैज्ञानिक किसी भी तरह के बैक्टीरिया का इस्तेमाल करके अनेक प्रकार के रसायन तैयार कर सकेंगे।

इस शोध के लिए वैज्ञानिकों ने ई-कॉली नामक बैक्टीरिया का इस्तेमाल किया है। इसमें बदलाव के लिए इवोल्युशनरी मैकेनिज्म को उपयोग में लाया गया। दरअसल जीवाणु एक कोशकीय होते हैं, लेकिन ये स्वयं को निरंतर विभाजित करते हुए अपना समूह विकसित कर लेते हैं। वैज्ञानिक इन जीवाणुओं पर ऐसे एंटीबायोटिक्स का प्रयोग करते हैं, जिससे केवल उत्पादन क्षमता रखने वाली कोशिकाएं ही जीवित रहें। इन कोशिकाओं के जीन में बदलाव करके ऐसे रसायन उत्पादन में सक्षम बनाया जाता है, जो उसे एंटिबायोटिक से बचाने में सहायक होता है। ऐसे में एंटीबायोटिक का सामना करने के लिए बैक्टीरिया को ज्यादा से ज्यादा रसायन का उत्पादन करना पड़ता है। रसायन उत्पादन की यह रफ्तार एक हजार गुना ज्यादा होती है। यह खोज 'सर्वाइवल ऑफ फिटेस्ट' के सिद्धांत पर आधारित है। इस सिद्धांत के अनुरूप यह चक्र निरंतर दोहराए जाने पर सबसे ज्यादा उत्पादन करने वाले चुनिंदा जीवाणुओं की कोशिकाएं ही बची रह जाती हैं। मानव शरीर में उनका उपयोग रसायनों की कमी आने पर किया जा सकेगा, ऐसर संभावना जताई जा रही है। इस खोज से फार्मास्युटिकल बायोयूल और अक्षय रसायन भी तैयार होंगे। लेकिन मानव शरीर में इसके भविष्य में क्या खतरे हो सकते हैं, यह प्रश्न फिलहाल अनुत्तरित ही है।

इसीलिए इन विषाणु व जीवाणुओं के उत्पादन पर यह सवाल उठ रहा है कि क्या वैज्ञानिकों को प्रकृति के विरुद्ध विषाणु- जीवाणुओं की मूल प्रकृति में दखलदांजी करनी चाहिए? दूसरे यह कि प्रयोग के लिए तैयार किए गए ऐसे जीवाणु व विषाणु कितनी सुरक्षा में रखे गए हैं? यदि वे जान-बूझकर या दुर्घटनावश बाहर आ जाते हैं, तो इनके द्वारा जो नुकसान होगा, उसकी जबावदेही किस पर होगी ? ऐसे में वैज्ञानिकों की ईश्वर बनने की महत्वाकांक्षा पर यह सवाल खड़ा होता है कि आखिर वैज्ञानिकों को अज्ञात के खोज की कितनी अनुमति दी जानी चाहिए ? क्योंकि अंततः ज्ञान की सीमा एक ऐसी अंधेरे में की जा रही अनंत गहराई है, जिसके खतरों की डोर आखिर में मनुष्य से ही जुड़ जाती है।

यह है कि फिलहाल इसका कोई इलाज पूरी दुनिया में नहीं है। इस पर किसी भी एंटीबायोटिक्स का असर भी नहीं होता है। ऐसे में इसकी चपेट में आए व्यक्ति के इलाज में चिकित्सक लाचार नजर आते है। केवल मरीज को अन्य रोगियों से अलग करके इलाज किया जाता है, जिससे दूसरे लोगों में यह वायरस न फैलने पाए।

कोरोना वायरसों का एक ऐसा बड़ा समूह है, जो आमतौर से जानवरों में पाए जाते हैं। अभी तक ज्ञात ऐसे छह विषाणुओं की पहचान हो चुकी है, जो मानव समूहों पर संक्रमण का कहर ढा रहे हैं। इनकी संख्या सात भी हो सकती है। फिलहाल इस वायरस के उत्पन्न होने के कारण पूरी तरह स्पष्ट नहीं हैं। चीन के पेकिंग विश्वविद्यालय के स्वास्थ्य विज्ञान केंद्र के शोधार्थियों ने इस कोरोना वायरस के सांप से इंसानों में प्रवेश का अंदेशा जताया है। जबकि चीनी अकादमी ऑफ साइंसेज द्वारा कराए गए शोध से पता चला है कि कोरोना की उत्पत्ति चमगादड़ व सांप दोनों में से हो सकती है। चीन में की गई आरंभिक जांचों से पता चला है कि वुहान सी-फूड बाजार में यह वायरस जानवरों के जरिए ही फैला है। सी-फूड यानी समुद्री जीव-जंतुओं व वनस्पतियों से निर्मित भोजन। इसका मुख्य स्रोत समंदर ही होता है। कोरोना से पीड़ित मरीजों ने यहीं से सी-फूड खरीदकर खाया था। ज्यादातर मरीज ऐसे हैं, जिनकी पहले से ही प्रतिरोधात्मक क्षमता कमजोर थी। मसलन ये लोग गरीबी के

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने फिलहाल इस वायरस के प्रकोप से बचने के उपायों में खाने से पहले हाथ धोना और मांसाहारी भोजन से बचने की सलाह दी है। यदि यह वायरस मनुष्य में पहुँच जाता है, तो इसके लक्षण जुकाम, खांसी, हाथ-पैरों में दर्द व बुखार के रूप में सामने आने लगते हैं। यदि इसका समय पर इलाज शुरू नहीं हुआ तो यह फेफड़ों को संक्रमित की निमोनिया में परिवर्तित होकर शवसन-तंत्र से जुड़े लोगों को नुकसान पहुँचाने लगता है। निमोनिया के असर के बाद वायरस अन्य अंगों के क्रिया-कलापों को निष्क्रिय करने लगता है। यह बीमारी वायरल निमोनिया कहलाती है। इस पर एंटीबोयोटिक्स व एंटी-वायरल ड्रग्स बेअसर रहते है।

चलते पौष्टिक आहार से वंचित थे। समुद्री-आहार शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों ही प्रकार का होता है। समुद्र में सर्पों की भी अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं। इन्हें मनुष्य पकड़ कर व्यंजन बनाता है और खा जाता है। कुछ मामलों में इन सांपों द्वारा शिकार बनाए जो जीव आधे-अधूरे खाए छोड़ दिए जाते हैं, उन्हें भी इंसान पका कर खा जाता है, जो कालांतर में इस जानलेवा विषाणु के शरीर में उत्सर्जन का कारक बन जाता है। समुद्री भोजन के रूप में बड़े पैमाने पर मछली, झींगा, केकड़ा, लॉबस्टर, स्क्विड और ओएस्टर जीव खाए जाते हैं। शाकाहारी भोजन के रूप में अनेक प्रकार की समुद्री काईयों और मेग्रोव पौधों को खाया जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने फिलहाल इस वायरस के प्रकोप से बचने के उपायों में खाने से पहले हाथ धोना और मांसाहारी भोजन से बचने की सलाह दी है। यदि यह वायरस मनुष्य में पहुँच जाता है, तो इसके लक्षण जुकाम, खांसी, हाथ-पैरों में दर्द व बुखार के रूप में सामने आने लगते हैं। यदि इसका समय पर इलाज शुरू नहीं हुआ तो यह फेफड़ों को संक्रमित की निमोनिया में परिवर्तित होकर शवसन-तंत्र से जुड़े लोगों को नुकसान पहुँचाने लगता है। निमोनिया के असर के बाद वायरस अन्य अंगों के क्रिया-कलापों को निष्क्रिय करने लगता है। यह बीमारी वायरल निमोनिया कहलाती है। इस पर एंटीबोयोटिक्स व एंटी-वायरल ड्रग्स बेअसर रहते है। यदि रोगी की प्रतिरोधात्मक क्षमता मजबूत हो तो उसके ठीक होने की उम्मीद बढ़ जाती है। चीन में जिन रोगियों की मौतें हुई हैं, उनका इम्यून सिस्टम कमजोर था। लाइलाज रहते हुए यह एक इंसान से अनेक इंसानों में फैलने लगता है। छींक और हाथ मिलाने से भी इसका संक्रमण फैलता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अपनी ताजा रिपोर्ट में बताया है कि 2002 में यह वायरस पहली बार संज्ञान में आया था। तब 37 देशों में इसका संक्रमण फैल गया था। इसके बाद 2003 में 8098 लोग इसकी चपेट में आए थे, जिनमें से 774 लोगों की मौत हो गई थी। वर्ष 2012 में यूरोप और मध्य-पूर्व में इस वायरस से संक्रमित होने वाले रोगियों की संख्या 33 तक पहुंच गई थी। इनमें से 18 काल के गाल में समा गए थे। इस खतरनाक वायरस का प्रकोप अब सऊदी अरब, जॉर्डन, जर्मनी, ब्रिटेन और फ्रांस में भी दिखाई दे रहा है। यहाँ संक्रमण से पीड़ित मरीजों की संख्या लगातार बढ़ रही है। कोरोना विषाणु के जेनेटिक कोड के विश्लेषण से पता चला है कि मनुष्य को संक्रमित करने की क्षमता रखने वाला यह कोरोना-वायरस, सार्स का निकट संबंधी है। 2002 में इसी सार्स के कहर से लगभग 800 लोगों की मौत हुई थी। चीन में इससे पहले फैले वायरसों से अनेक मौतें हो चुकी हैं। विश्व-स्वास्थ्य संगठन के अनुसार चीन में बर्ड फ्लू से 2003 से लेकर अब तक 440 मौतें हो चुकी हैं। सार्स वायरस से 2003 में दक्षिणी चीन से निकले वायरस ने 26 देशों में फैलकर 8000 लोगों को अपनी गिरत में ले लिया था, जिनमें से 774 मारे गए थे। इबोला वायरस से अकेले पश्चिमी अफ्रीका में 11,316 और दुनिया के अन्य देशों में 1597 लोग मारे गए थे। भारत में फैले स्वाइन लू से 2016 में 2992 मौतें हुई थीं। बहरहाल इस खतरनाक वायरस के लक्षण जरूर सामान्य से रोग सर्दी-जुकाम-बुखार व सूजन के रूप में सामने आते हैं, लेकिन इस बेअसर करने वाला फिलहाल कोई टीका अस्तित्व में नहीं आ पाया है। इसलिए यह जानलेवा बना हुआ है, गोया इसके संक्रमण से बचने का फिलहाल सबसे प्रमुख उपाय समुद्री खाद्य सामग्री खाने से बचना तो है ही, सावधानी व सतर्कता बरतना भी जरूरी है।

pramod.bhargava15@gmail.com

जी सैट-30

संचार उपग्रह का सफल प्रमोचन

कालीशंकर

इसरो के वरिष्ठ वैज्ञानिक विगत लगभग चालीस वर्षों से अंतरिक्ष विज्ञान और अंतरिक्ष अन्वेषण पर लेखन करते रहे हैं। तीन सौ से अधिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपे तथा 25 पुस्तकें प्रकाशित हुईं हैं। आपको कई राष्ट्रीय सम्मानों से सम्मानित किया गया है। कालीशंकर लखनऊ में निवास करते हैं।

17 जनवरी, 2020 को सुबह 2:35 बजे (भारतीय समयानुसार) भारतीय अन्तरिक्ष संस्था को एक नई सफलता मिली जब देश के सबसे शक्तिशाली संचार उपग्रह जी सैट-30 का प्रमोचन फ्रेंच गुएना के कोरू स्थित अन्तरिक्ष केन्द्र से यूरोपीय राकेट एरियन 5-V, 251 के द्वारा किया गया। भारतीय संचार उपग्रह जी सैट-30 के साथ एक अन्य उपग्रह यूटेलसैट कोनेक्ट का भी प्रमोचन किया गया। जी सैट-30 उपग्रह इसरो का वर्ष 2020 का प्रथम प्रमोचन है तथा प्रमोचन के 40 मिनट के बाद जी सैट-30 उपग्रह निर्धारित कक्षा में पहुँच गया।

इसरो ने जानकारी देते हुए बताया कि जी सैट-30 उपग्रह इनसैट-4ए उपग्रह की जगह लेगा तथा इसकी संचार कवरेज क्षमता काफी ज्यादा होगी। यह उपग्रह देश की संचार प्रौद्योगिकी में कई बड़े परिवर्तन लायेगा तथा इंटरनेट स्पीड को बढ़ायेगा। इसके साथ ही साथ यह मोबाइल नेटवर्क और डीटीएच सेवाओं का विस्तार भी करेगा। इंटरनेट के सन्दर्भ में देश में 5 जी तकनीक पर तेजी से काम हो रहा है तथा मोबाइल और डीटीएच नेटवर्क का भी विस्तार हो रहा है। संचार व्यवस्था को बेहतर बनाने के लिए हमें ज्यादा ताकतवर उपग्रह की आवश्यकता थी तथा वह ताकत यह उपग्रह प्रदान करेगा। इसरो के यू.आर.राव उपग्रह केन्द्र के निदेशक पी.कून्हीकृष्णन ने संचार उपग्रह जी सैट-30 के लाँच पर खुशी जाहिर करते हुए कहा, ''इस साल की शुरूआत एक शानदार लाँच से हुई है। इसरो ने 2020 का मिशन कैलेन्डर जी सैट-30 को सफलतापूर्वक लाँच करके किया। इस लाँच की खास बात यह है कि इसे जिस एरियन-5 राकेट से लाँच किया गया था उसका पहली बार इस्तेमाल वर्ष 2019 में भी किया गया था। तब भी इस राकेट का इस्तेमाल भारतीय उपग्रह को लाँच करने के लिए किया गया था। यह उपग्रह भारतीय प्रमुख क्षेत्र उपद्वीप क्षेत्रों को कू-बैन्ड और विस्तृत सी बैन्ड आवृत्तियों में संचार कवरेज प्रदान करेगा तथा इसकी सेवाएँ गल्फ देशों तथा आस्ट्रेलिया और एशिया के कई अन्य देशों को भी उपलब्ध होंगी।

जी सैट-30 उपग्रह

जी सैट-30 डीटीएच, टेलीविजन अपलिंग और वी सैट सेवाओं के लिए संचार उपग्रह है। इसका स्वरूपण इसरो की विस्तृत आई-3 के बस ढाँचे के आधार पर किया गया है जिससे यह सी-बैन्ड और कू-बैन्ड में भू स्थिर कक्षा से संचार सेवाएँ प्रदान कर सके। यह अपनी महत्ता के लिए इसरो के पूर्व इन्सैट/जी सैट श्रृंखला उपगहों से जुड़ा हुआ है। इसके विभिन्न तकनीकी गणक सारणी-1 में दिये गये हैं। यह उपगह इसरो के इन्सेट-4ए पुराने उपग्रह को रिप्लेस करेगा तथा संचार कवरेज क्षेत्र को बढ़ायेगा। इसके डिजाइन में संचार नीतभारों का विशेष रूप से ध्यान रखा गया है तथा डिजाइन इस प्रकार से किया गया है कि अन्तरिक्षयान की बस में ट्रान्सपान्डरों की संख्या इष्टतम हो। यह उपग्रह द्वि-ग्रिड परावर्तक एन्टेना सी-बैन्ड और कू-बैन्ड की विस्तृत संचार कवरेज प्रदान करेगा तथा एक कू-बैन्ड ग्रेगोरियन एन्टेना भारतीय मुख्य क्षेत्र और उपद्वीपों में संचार

एरियन-5 राकेट प्रमोचन के लिए तैयार

सारणी-1
जी सैट-30 के तकनीकी गणक

1.	भार	:	3357 कि.ग्रा.
2.	काम करने की आवृत्तियाँ	:	कू-बैन्ड और विस्तृत सी बैन्ड
3.	प्रयुक्त बस	:	आई-3 के
4.	मिशन जीवल काल	:	15 वर्ष
5.	उपग्रह उपयोग	:	संचार
6.	गन्तव्य कक्षा	:	भू समकालिक कक्षा
7.	उपग्रह की पावर	:	6000 वाट
8.	प्रमोचन राकेट	:	एरियन 5 वीसीए, वीए-251
9.	प्रमोचन सिल	:	कोरू ईएलए-3
10.	अन्तरिक्ष में उपग्रह स्थिति	:	830 पूर्व
11.	ट्रान्सपान्डरों की संख्या	:	12 सी बैन्ड- विस्तृत कवरेज 12 कू-बैन्ड- भारतीय प्रमुख क्षेत्र एवं उपद्वीप कवरेज
12.	प्रमोचन तिथि	:	17 जनवरी, 2020 सुबह 2:35 बजे (भारतीय समय)

कवरेज प्रदान करेगा। उपग्रह में लगा कू-बैन्ड बीकन ट्रान्समीटर पृथ्वी के भू केन्द्रों को उपग्रह की ओर परिशुद्धता से अपने एन्टेना को केन्द्रित करने में मदद करेगा। इसका प्रमोचन कोरू प्रमोचन केन्द्र से एरियन-5 राकेट से किया गया।

जी सैट-30 का प्रमोचन राकेट एरियन-5

जी सैट-30 का प्रमोचन एरियरन-5 राकेट की 'वीए 251' उड़ान से सम्पन्न हुआ। एरियन-5 एक भारी उत्थापन प्रमोचन योरपीय वेहिकल है जो एरियन राकेट परिवार से सम्बन्धित है। यह एक विस्तरणीय (एक्सटेन्डेबुल) प्रमोचन तंत्र है जिसका डिजाइन फ्रान्सीसी सरकार की अन्तरिक्ष संस्था 'सीएनईएस' के द्वारा किया गया है। इसका उपयोग नीतभारों को भू स्थिर ट्रान्सफर कक्षा (जीटीओ) या भू निम्न कक्षा (एलईओ) में पहुँचाने के लिए किया जाता है।

एरियन-5 प्रमोचन राकेट के मुख्य चार भाग होते हैं- क्रायोजेनिक मुख्य स्टेज, ठोस बूस्टर, द्वितीय स्टेज और नीतभार फेयरिंग। क्रायोजिनक मुख्य स्टेज में एक 30.5 मीटर ऊँचा विशाल टैंक होता है जिसके दो भाग होते है- एक द्रव ऑक्सीजन और दूसरा द्रव हाइड्रोजन के लिए और एक वल्केन 2 इंजन (नीचे) होता है जिसकी निर्वात में प्रणोद जनन क्षमता 1390 कि. न्यूटन होती है।

राकेट के साथ दो ठोस बूस्टर लगे होते है जिनमें प्रत्येक का भार 277 टन होता है तथा ये 7080 कि. न्यूटन का प्रणोद प्रदान करते हैं। इनमें से प्रत्येक पृथ्वी पर गिरने के पहले 130 से.मी. तक जलकर उपर्युक्त प्रणोद प्रदान करते हैं। प्रत्येक की लम्बाई 31.6 मीटर और व्यास 3.06 मीटर है।

द्वितीय स्टेज मुख्य स्टेज के ऊपर तथा नीतभार के नीचे होती है तथा इसका ईंधन द्रव हाइड्रोजन तथा द्रव ऑक्सीजन होता है। इस स्टेज में बहु प्रज्ज्वलन की क्षमता होती है। द्वितीय स्टेज की लम्बाई 4.711 मीटर तथा व्यास 5.4 मीटर होता है। इसका ईंधन के साथ भार 19440 कि.ग्रा. तथा जनित प्रणोद 67 कि. न्यूटन होता है।

नीतभार और ऊपरी स्टेजों को प्रमोचन के समय एक नीतभार फेयरिंग से ढके रहते हैं तथा उनका प्रज्ज्वलन तब किया जाता है जब यह 100 कि.मी. की ऊँचाई पर पहुँच जाता है। फेयरिंग का प्रयोग एरोडाइनामिक स्थायित्व तथा तंत्र को अत्यधिक हीटिंग से बचाने के लिए भी किया जाता है।

38 मिनट के अन्दर एरियन-5 राकेट ने जी सैट-30 को इसकी निर्धारित कक्षा में स्थापित कर दिया। सफल प्रमोचन को स्वीकार करते हुए एरियन स्पेस के सीईओ स्टीफैनी इज़रेल ने ट्वीट किया, ''वर्ष 2020 का प्रारंभ बहुत अच्छे तरीके से हुआ जब एरियन-5 ने सफलतापूर्वक दो उपग्रहों - यूटेलसैट कोनेक्ट और जी सैट-30 को सफलतापूर्वक भू स्थिर ट्रान्सफर कक्षा में स्थापित कर दिया। मैं दोनों ग्राहकों द्वारा हमारे ऊपर किये गये विश्वास के लिए हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ।''

जी सैट-30 उपग्रह की जाँच कार्य

कुछ दिलचस्प पहलू

- इस मिशन के साथ दो उपग्रह प्रमोचित किये गये।
- जी सैट-30 उपग्रह के नीतभारों का डिजाइन इस प्रकार किया गया है जिससे इसमें अधिक संख्या में ट्रान्सपान्डर भेजे जा सकें।
- जी सैट-30 उपग्रह का प्रयोग विशेष रूप में वी सैट नेटवर्क, टेलीविजन अपलिंकिंग एवं टेलीपोर्ट सेवाओं, डिजिटल उपग्रह न्यूज गैदरिंग (डीएसएनजी), डीटीएच टेलीविजन सेवाओं, सेल्युलर बैकहॉल कनेक्टिविटी और इस प्रकार के अनेक उपयोगों को सपोर्ट करने के लिए किया जायेगा।
- जी सैट-30 इसरो का 41वाँ संचार उपग्रह है तथा एरियन स्पेस के द्वारा प्रमोचित इसरो का 23वाँ उपग्रह है। एरियन श्रृंखला के 251 वें प्रमोचन एरियन-5 राकेट का 107 वाँ मिशन था।

जी सैट-30 उपग्रह के उपयोग

- जी सैट-30 उपग्रह का विस्तृत उपयोग वी सैट नेटवर्क, टेलीविजन अपलिंकिंग और टेलीपोर्ट सेवाओं, डिजिटल सैटेलाइन न्यूज गैदरिंग (डीएसएनजी), डीटीएच-टेलीविजन सेवाओं, सेल्युलर बैकहॉल कनेक्टिविटी और इस प्रकार अनेक उद्देश्यों के लिए किया जायेगा।
- यह सी बैन्ड में विस्तृत संचार कवरेज प्रदान करेगा जिससे टेलीविजन प्रेषको (ब्राडकास्टर) को अपने कार्यक्रमों को भारत, गल्फ देशों, एशिया के अनेक देशों और आस्ट्रेलिया के ऊपर केन्द्रित (बीम) करने में मदद मिलेगी।
- इस उपग्रह से एक कू-बैन्ड बीकन के डाउनलिंग सिग्नल का प्रेषण भू अनुवर्तन उद्देश्यों के लिए किया गया है जिससे भू केन्द्र परिशुद्धता से अपने एन्टेना जी सैट-6 की ओर उन्मुख कर सके।

लाँच वेहिकल से जी सैट-30 उपग्रह के अलग होने के बाद की प्रक्रिया

एरियन-5 प्रमोचन वेहिकल से जी सैट-30 के अलग हो जाने के बाद कर्नाटक के हासन कस्बे में स्थित प्रधान नियंत्रण सुविधा (एमसीएफ) ने जी सैट-30 उपग्रह का नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया। उपग्रह पर की गई प्रारंभिक जाँचों में उपग्रह सुचारू रूप से प्रचालित और ठीक पाया गया। आने वाले कुछ दिनों में इस उपग्रह पर कुछ कक्षीय उत्थापन सम्पन्न किये जायेंगे जिससे इसे आन-बोर्ड नोदन तंत्र के द्वारा भू स्थिर कक्षा (भू मध्य रेखा के ऊपर 36000 कि. मी. की ऊँचाई पर) में स्थापित कर दिया जायेगा।

कक्षीय उत्थापन की आखिरी स्टेजों में जी सैट-30 उपग्रह के दो सोलर एरे और एन्टेना परावर्तक प्रस्तरित (डिप्लाय) किये जायेंगे। इसके बाद उपग्रह आखिरी कक्षीय स्वरूप में पहुँच जायेगा। सभी कक्षीय जाँचों के सफल सम्पादन के बाद उपग्रह पूर्ण रूपेण प्रचालनीय घोषित कर दिया जायेगा।

जी सैट-30 उपग्रह पर प्रधानमंत्री की इसरो को बधाई

प्रधानमंत्री ने 17 जनवरी, 2020 को इसरो को वर्ष 2020 के प्रथम उपग्रह के प्रमोचन पर बधाई दी कि यह डीटीएच सेवाओं, एटीएम और स्टाक एक्सचेंज कनेक्टिविटी को बढ़ायेगा। अपने वक्तव्य में उन्होने कहा, ''इसरो को वर्ष 2020 के प्रथम उपग्रह प्रमोचन पर इसरो टीम को बधाई। जी सैट-30 अपने विशिष्ट स्वरूप के द्वारा डीटीएच टेलीविजन सेवा, एटीएम, स्टाक एक्सचेंज और ई-गवर्नेन्स कनेक्टिविटी प्रदान करेगा। वर्ष के लिए आगामी अपने सफल मिशनों के लिए इसरो को बधाई।'' जी सैट-30 के अपने सफल प्रमोचन पर उपराष्ट्रपति वेंकटैया नायडू, केन्द्रीय मंत्री जितेन्द्र सिंह, भूतपूर्व, केन्द्रीय मंत्री और लोक सभा सदस्य महेश शर्मा ने भी इसरो को बधाई दी।

जी सैट-श्रृंखला के संचार उपग्रह

इसरो ने अब तक जी सैट-30 को मिलाकर कुल 22 जी सैट उपग्रह अन्तरिक्ष में प्रमोचित किये हैं। इस श्रृंखला का प्रथम उपग्रह जी सैट-1 था जो 18 अप्रैल, 2001 को जीएसएलवी- D1 राकेट से प्रमोचित किया गया तथा हालिया उपग्रह जी सैट-30 था जो एयिरन-5 राकेट से प्रमोचित किया गया। जी सैट श्रृंखला के 22 उपग्रहों में 11 उपग्रह जी एस एल वी राकेट से प्रमोचित किये गये एक उपग्रह (जी सैट-12) पीएसएलवी राकेट से प्रमोचित किया गया तथा 10 उपग्रह एरियन-5 राकेट से प्रमोचित किये गय। एरियन-5 राकेट से प्रमोचित किया गया प्रथम जी सैट श्रृंखला का उपग्रह जी सैट-8 तथा हालिया उपग्रह जी सैट-30 था। जी सैट श्रृंखला का और इसरो का सबसे भारी उपग्रह जी सैट-11 था जिसका भार 5854 कि.ग्रा. था। जी सैट श्रृंखला का सबसे हल्का उपग्रह जी सैट-12 था जिसका भार 1412 कि.ग्रा. था।

जी सैट-30 उपग्रह

जी सैट-30 उपग्रह का विस्तृत उपयोग वी सैट नेटवर्क, टेलीविजन अपलिंकिंग और टेलीपोर्ट सेवाओं, डिजिटल सैटेलाइन न्यूज गैदरिंग (डीएसएनजी), डीटीएच-टेलीविजन सेवाओं, सेल्युलर बैकहॉल कनेक्टिविटी और इस प्रकार अनेक उद्देश्यों के लिए किया जायेगा।

यह सी बैन्ड में विस्तृत संचार कवरेज प्रदान करेगा जिससे टेलीविजन प्रेषको (ब्राडकास्टर) को अपने कार्यक्रमों को भारत, गल्फ देशों, एशिया के अनेक देशों और आस्ट्रेलिया के ऊपर केन्द्रित (बीम) करने में मदद मिलेगी।

ksshukla@hotmail.com

व्योममित्रा

प्रथम भारतीय अंतरिक्ष रोबोट

डॉ. शुभ्रता मिश्रा

वनस्पति शास्त्र में शोध करने वाली डॉ. शुभ्रता मिश्रा युवा विज्ञान लेखिका हैं आपने इंडिया साइंस वॉयर, विज्ञान प्रसार में अब तक 350 विज्ञान कथा और लेख लिखे हैं। आपके विज्ञान लेख आकाशवाणी से प्रसारित होते रहे हैं। अंग्रेजी में पंद्रह तथा हिन्दी में पांच पुस्तकें लिखीं जिनमें 'भारतीय अंटार्कटिक संभारतंत्र' काफी चर्चित हुई है। इस किताब को राष्ट्रीय अंटार्कटिक एवं समुद्री अनुसंधान केन्द्र, पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया है। कई पुरस्कारों से सम्मानित डॉ. शुभ्रता गोवा में रहती हैं।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन इसरो की नित नवीन अंतरिक्ष वैज्ञानिक गतिविधियों ने भारत के छोटे-बड़े सभी उम्र के हर खास एवं आम व्यक्ति में अंतरिक्ष के प्रति एक वैज्ञानिक कौतुहल और चेतना दोनों विकसित कर दी हैं। इसरो के विभिन्न उपग्रह प्रक्षेपण, चंद्रयान, मंगलयान और अब गगनयान मिशनों से सभी भारतीय ऐसे जुड़े हुए हैं, मानो वे भी उन अभियानों के भाग हों। इन दिनों व्योममित्रा की चर्चा जोरों पर है। वैज्ञानिक भाषा में कहें तो व्योममित्रा हाफ-ह्यूमनॉइड की एक प्रोटोटाइप है। ह्यूमनॉइड शब्द का प्रयोग उन रोबोट के लिए किया जाता है, जो आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस की सहायता से मनुष्य की तरह व्यवहार करते हैं। अतः व्योममित्रा को यदि सर्वसाधारण की सरल भाषा में समझें तो वास्तव में वह कृत्रिम बुद्धिमत्ता यानी आर्टीफिशियल इंटेलीजेंस पर तैयार किया गया एक रोबोट है, जिसे एक महिला का रूप प्रदान किया गया है। इस महिला रोबोट को अगले वर्ष 2021 दिसंबर में प्रथम भारतीय मानव रहित गगनयान में शोधकार्यों हेतु भेजा जाएगा।

विशेष तौर पर इस मिशन के लिए तैयार की गई व्योममित्रा के कार्यों में गगनयान में माड्यूल पैरामीटरों की निगरानी, पैनल ऑपरेशन शुरू करने जैसी अन्य गतिविधियों का संचालन, शरीर के तापमान और धड़कन संबंधी परीक्षण और सबसे बढ़कर अंतरिक्ष से इसरो वैज्ञानिकों को सतर्क करना शामिल हैं। इसके साथ ही व्योममित्रा एक पूर्ण निष्ठावान सहयोगी की तरह अंतरिक्ष यात्रियों से वार्तालाप करते हुए उनको आवश्यक जानकारियां प्रदान करने में भी सक्षम की गई है। सार रूप में देखा जाए तो व्योममित्रा अंतरिक्ष में हू-ब-हू मनुष्य की भांति सभी कार्यों को कर सकती है। व्योममित्रा को मनुष्य की तरह बनाने के पीछे उद्देश्य यही है कि उसकी गतिविधियों द्वारा भारतीय अंतरिक्ष वैज्ञानिकों को यह समझने में आसानी हो सकेगी कि अंतरिक्ष में मानव का व्यवहार कैसा हो सकता है।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने 22 जनवरी 2020 को पहली बार अपनी इस महिला रोबोट व्योममित्रा का वीडियो प्रस्तुत किया। आज से पूरे छत्तीस साल पहले 2 अप्रैल 1984 को रूस के अंतरिक्ष यान सोयुज़ टी-11 में प्रथम भारतीय अंतरिक्ष यात्री राकेश शर्मा को अंतरिक्ष में जाने का सुअवसर मिला था। अब समय आ गया है जब पहली महिला भारतीय रोबोट व्योममित्रा भारतीय अंतरिक्षयान गगनयान में बैठकर अंतरिक्ष जाएगी। यहाँ यह कहना विशेष उल्लेखनीय है कि भारत की स्त्रियों के प्रति सम्मान और विश्वास की भावना के कारण ही अंतरिक्ष में भेजे जाने वाले रोबोट को महिला का स्वरूप प्रदान किया गया है। वर्ष 2022 में इसरो द्वारा निर्धारित मानव मिशन गगनयान में भेजे जाने वाली हाफ-ह्यूमनॉइड रोबोट व्योममित्रा को लगभग पूरा तैयार कर लिया गया है। व्योममित्रा किसी समझदार, अनुभवी और विदुषी भारतीय महिला की भांति सभी तरह की मानवीय भावनाओं को समझ सकने और पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देने में पूर्णतया सक्षम है। ऐसा इसरो वैज्ञानिकों द्वारा व्योममित्रा रोबोट के अंदर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस

भारतीय व्योममित्रा इन सभी से इसलिए अलग है क्योंकि यह अंतरिक्ष विज्ञान जैसे विषय को ध्यान में रखते हुए बनाई गई है। हालांकि ह्यूमनॉइड रोबोट कोई भी हों उनमें प्रमुखतौर पर दो भाग क्रमशः संवेदक और एक्च्यूएटर्स होते हैं, जो उन्हें मानव की तरह प्रतिक्रिया देने और चलने फिरने में सहायता करते हैं। ह्यूमनॉइड रोबोट संवेदकों द्वारा ही अपने आस-पास के वातावरण को अनुभव कर पाते हैं। उनमें फिट किए गए कैमरा, स्पीकर और माइक्रोफोन जैसे उपकरण इन्हीं संवेदकों द्वारा नियंत्रित किए जाते हैं। इनके माध्यम से ही अपनी कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग करते हुए ह्यूमनॉइड रोबोट देखने, बोलने और सुनने जैसी मानवीय गतिविधियां कर पाने में सफल हो पाते हैं। वहीं एक्च्यूएटर्स नामक दूसरा भाग एक मोटर की तरह होता है, जो ह्यूमनॉइड रोबोटों को मनुष्य की तरह चलने, हाथ-पैरों के प्रचालन और कुछ विशेष कार्यों को करने में सहायता प्रदान करता है।

प्रोग्रामिंग भरने से हुआ है। यहाँ तक कि व्योममित्रा एक व्यक्ति की तरह चल फिर भी सकती है।

सामान्य तौर पर वैज्ञानिकों द्वारा अब तक कई ह्यूमनॉइड रोबोट बनाए जा चुके हैं और वे अपने निर्धारित कार्यों को भली-भांति कर पाने में पूरी तरह सफल भी रहे हैं। इनमें से विश्व का सबसे प्रसिद्ध प्रथम ह्यूमनॉइड रोबोट सोफिया, जापान का कोडोमोरॉइड और चीन का जिया जिया प्रमुख हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि ये तीनों ह्यूमनॉइड रोबोट भी महिला आकृति वाले हैं। दुनिया की पहली ह्यूमनॉइड रोबोट नागरिक सोफिया, जिसे साऊदी अरब की नागरिकता भी मिली है, को 11 अक्टूबर, 2017 को संयुक्त राष्ट्र में विश्व बिरादरी के समक्ष लाया गया था। उस समय पूरा विश्व सोफिया की बातों से दांतों तले उंगली दबा रहा था, पर उस समय किसी भी भारतीय ने नहीं सोचा था कि एक दिन हम भी व्योममित्रा के रूप में अपनी भारतीय ह्यूमनॉइड रोबोट भी बना पाएंगे। जापानी शब्द कोडोमो अर्थात् बच्चा और गूगल के एंड्रॉइड के संधि संयोजन से बनाए गए कोडोमोरॉइड नामक जापान की बहुभाषी ह्यूमनॉइड रोबोट जापानी टेलीविजन पर समाचार पढ़ने के साथ साथ मौसम की जानकारी भी देती है। इसी तरह चीन की साइंस एंड टेक्नॉलॉजी यूनिवर्सिटी द्वारा तैयार की गई जियाजिया नामक ह्यूमनॉइड रोबोट में भी मानवीय भावनाओं को समझने और बात करने की क्षमता है।

लेकिन भारतीय व्योममित्रा इन सभी से इसलिए अलग है क्योंकि यह अंतरिक्ष विज्ञान जैसे विषय को ध्यान में रखते हुए बनाई गई है। हालांकि ह्यूमनॉइड रोबोट कोई भी हों उनमें प्रमुखतौर पर दो भाग क्रमशः संवेदक और एक्च्यूएटर्स होते हैं, जो उन्हें मानव की तरह प्रतिक्रिया देने और चलने फिरने में सहायता करते हैं। ह्यूमनॉइड रोबोट संवेदकों द्वारा ही अपने आस-पास के वातावरण को अनुभव कर पाते हैं। उनमें फिट किए गए कैमरा, स्पीकर और माइक्रोफोन जैसे उपकरण इन्हीं संवेदकों द्वारा नियंत्रित किए जाते हैं। इनके माध्यम से ही अपनी कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग करते हुए ह्यूमनॉइड रोबोट देखने, बोलने और सुनने जैसी मानवीय गतिविधियां कर पाने में सफल हो पाते हैं। वहीं एक्च्यूएटर्स नामक दूसरा भाग एक मोटर की तरह होता है, जो ह्यूमनॉइड रोबोटों को मनुष्य की तरह चलने, हाथ-पैरों के प्रचालन और कुछ विशेष कार्यों को करने में सहायता प्रदान करता है।

व्योममित्रा भी इन्हीं दो मुख्य भागों पर काम कर रही है। अंतर सिर्फ यह है कि इसकी प्रोग्रामिंग में इसरो वैज्ञानिकों ने अंतरिक्ष में होने वाली गतिविधियों को समझने संबंधी तथ्यों को भरा है। सबसे लोकप्रिय इसरो नाम से प्रसिद्ध बंगलौर में 15 अगस्त 1969 को स्थापित भारतीय अन्तरिक्ष अनुसन्धान संगठन ने अपने विभिन्न उपग्रहों, प्रमोचक यानों, परिज्ञापी राकेटों और भू-प्रणालियों के विकास जैसे अनेक अन्तरिक्ष कार्यक्रमों द्वारा विश्व में भारत को विराजमान किया है। लगभग सत्रह हजार कर्मचारियों एवं अंतरिक्ष वैज्ञानिकों से समृद्ध इस संस्थान के परिवार में पहली बार व्योममित्रा जैसा ह्यूमनॉइड रोबोट भी शामिल हो गया है। अब इसरो वास्तविक और कृत्रिम दोनों बुद्धियों के बल पर भारत को अंतरिक्ष की और भी अनंत ऊँचाइयों पर ले जाने की तैयारी कर चुका है। वह दिन दूर नहीं जब भारत आर्यभट्ट, भास्कर, रोहिणी, एसएलवी, पीएसएलवी, जीएसएलवी, चंद्रयान-1 और मंगलयान के सफल प्रक्षेपणों के बाद अब व्योममित्रा की अन्य संततियों के साथ अपने गगनयान को ले जाने में सफल होगा।

shubhrataravi@gmail.com

भारी धातुएँ और मृदा प्रदूषण

डॉ.दिनेश मणि

डी.फिल. डी.एस-सी तक शिक्षा प्राप्त दिनेश मणि इलाहाबाद में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर हैं। वे तीन दशकों से विज्ञान लेखक और विज्ञान संचारक की भूमिका में विज्ञान परिदृश्य पर विद्यमान हैं। उनकी हिन्दी में 50, अंग्रेजी में 10 और 105 शोधपत्र प्रकाशित हैं। डॉक्टरेट हेतु बीस छात्रों का निर्देशन करने वाले दिनेश मणि को सरस्वती नामित पुरस्कार, बायोटेक हिन्दी ग्रन्थ पुरस्कार, सूचना प्रौद्योगिकी राष्ट्रीय, प्राकृतिक ऊर्जा पुरस्कार, अनुसृजन सम्मान, फैलोशिप अवार्ड, डॉ.सम्पूर्णानन्द नामित पुरस्कार, बाबूराव विष्णु पराड़कर नामित पुरस्कार, शताब्दी सम्मान, शिक्षा पुरस्कार, आत्माराम पुरस्कार, डॉ. जगदीश चंद्र बोस पुरस्कार, बाबू श्यामसुन्दर दास सर्जना पुरस्कार, इंदिरा गाँधी राजभाषा पुरसकार, सारस्वत सम्मान तथा आईसीएमआर पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

कृषि एवं औद्योगिक दोनों ही प्रकार के क्रियाकलापों द्वारा मृदा में भारी धातुओं की मात्रा बढ़ती जा रही है। अनुपचारित वाहित मल-जल तथा अवमल के प्रयोग से मृदा में भारी धातुओं यथा- कैडमियम, क्रोमियम, लैड, मरकरी इत्यादि की सान्द्रता में वृद्धि हो रही है। आजकल शहरों के निकटवर्ती भू-भाग पर सब्जियों की खेती बहुतायत से की जा रही है। इन सब्जियों की फसलों की सिंचाई हेतु प्रायः शहरों के नालों में बहने वाले घरेलू तथा औद्योगिक वाहित मल-जल का प्रयोग किया जाता है जिसके परिणाम स्वरूप पौधों के खाद्य भागों विशेष रूप से पत्तियों तथा जड़ों में भारी धातुओं के संचय की पुष्टि हो चुकी है।

दीर्घकाल तक प्रदूषित जल से सिंचाई करते रहने से मृदा में भारी धातुओं यथा- कैडमियम, क्रोमियम, लेड, आर्सेनिक, मरकरी आदि का संचय होता रहता है। मृदा में इनका विच्छेदन न होने पाने के कारण ये भारी धातुयें मृदा जैव-मण्डल में लम्बे समय तक विद्यमान रहती हैं और पौधों द्वारा अवशोषित होकर खाद्य-श्रृंखला के माध्यम से पशुओं व मनुष्यों के शरीर में पहुँचकर स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं।

सामान्यतः भारी धातुएँ वे हैं जिनका घनत्व 5 से अधिक हो किन्तु आजकल इस मूल संकल्पना में परिवर्तन हो चुका है। अब भारी धातुएं उन्हें माना जाता है जिनमें इलेक्ट्रॉन स्थानान्तरण का गुणधर्म पाया जाता है। कुछ भारी धातुयें जैसे- कॉपर, आयरन, मैंगनीज, जिंक, मोलिब्डिनम तथा कोबाल्ट की सूक्ष्म मात्रा पौधों के लिये आवश्यक होती है। कुछ भारी धातुयें जैसे क्रोमियम, निकल तथा टिन की सूक्ष्म मात्रा जानवरों के लिये आवश्यक होती हैं, किन्तु कैडमियम, मरकरी तथा लैड न तो पौधों के लिये आवश्यक है और न ही जानवरों के लिये (अर्थात् पर्यावरण में इनकी उपस्थिति वनस्पतियों, जीवों एवं स्वयं मनुष्य के लिये हानिकारक होती है) ये विषैली भारी धातुयें अनुमेय सान्द्रण सीमा से अधिक होने पर मृदा के धात्विक प्रदूषण का कारण बनती है।

इन धातुओं का औद्योगिक महत्व होने के नाते रोजे नये-नये कारखानों की स्थापना हो रही है फलतः प्रतिदिन अपशिष्ट के रूप में इन धातुओं का ढेर-सा लग जाता है और पर्यावरण में इन धातुओं का प्रचुर अंश विष रूप में मिलता रहता है। इन अपशिष्टों के हवा, नदी-नाले तथा मिट्टी आदि में पहुँचने से जल तथा मृदा के धात्विक प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो जाती है। जल, वायु, मृदा ही नहीं अपितु इससे अब खाद्य सामग्री भी प्रदूषित होने लगी है।

जापान में 'मिनीमाता' नामक स्थान पर हुयी एक दुर्घटना ने सारे विश्व का ध्यान धातु प्रदूषण की ओर आकर्षित किया। इस दुर्घटना में 56 लोगों की मृत्यु हुयी थी और काफी लोग विकलांग हो गये थे। माताओं के गर्भ में पल रहै बच्चे भी इस दुर्घटना से दुष्प्रभावित हुये न बच सके। यह दुर्घटना एक रासायनिक कारखाने की वजह से हुयी थी जो अपने अपशिष्ट पदार्थों को मिनीमाता की खाड़ी में फेंक देता था, इन पदार्थों में पारा (मरकरी) के लवण मुख्य थे। इससे खाड़ी का पानी प्रदूषित हो गया था। पारा के लवणों के कारण खाड़ी की मछलियाँ विषैली हो गयीं थी। इनके खाने से यह विष मनुष्यों के शरीर में भी पहुँच गया था। उस समय खाड़ी के जल में पारा की मात्रा 1.6-3.6 पी.पी.बी. (अंश/बिलियन) थी जबकि सामान्य दिनों में पारा का स्तर केवल 0.1 पी.

पी.बी. (अंश/बिलियन) रहता था। वास्तव में अधिकांश उद्योगों (जैसे प्लास्टिक, कागज, रंग पॉलिश आदि उद्योग) में पारे के कार्बनिक तथा अकार्बनिक यौगिकों का उपयोग किया जाता है, जिन्हें अंत में बेकार पानी के साथ समुद्र या नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है। अब मछलियाँ इस जल में जाती हैं तो वे अधिक पारा युक्त चारा खाती हैं। जिस मछली में प्रतिकिलो भार पर 1 मि.ग्रा.से अधिक पारा रहता है वह खाने के लायक नहीं रहती।

यदि प्रतिदिन लगातार कई सप्ताहों तक ऐसी वायु में सॉस ली जाये जिसमें प्रतिघन मीटर 0.01 मि.ग्रा. पारा हो तो सिर दर्द, थकान तथा मस्तिष्क शिथिलता का अनुभव होने लगेगा। अनुमान है कि मनुष्य प्रतिदिन भोजन से 0.005 मि.ग्रा. पारा ग्रहण करता है। किन्तु यह भी ध्यान रहे कि प्रति सप्ताह 0.3 मि.ग्रा.से अधिक पारा ग्रहण नहीं किया जा सकता। विकासशील देशों में प्रतिवर्ष बीजों को उपचारित करने के लिये हजारों टन पारा जीवनाशियों का प्रयोग होता है जिसके कारण असावधान कृषकों की मृत्यु होती रहती है। कभी-कभी उपचारित बीजों को चिड़ियाँ चुग लेती हैं तो वे भी बड़ी संख्या में मरने लगती हैं। किन्तु गो पशु इसके प्रति सर्वाधिक संवेदनशील होते हैं, पशुओं में जूँ मारने की घरेलू दवाओं तथा कैलोमेल के प्रयोग से पशुओं की मृत्यु हो सकती है। इसकी विषाक्तता से लार गिरना, वमन, खाने में अरुचि तथा पक्षाघात के लक्षण देखे जाते हैं।

कैडमियम भी एक विषैली भारी धातु है। यह खनन, धातुकर्म, रसायन उद्योग, सुपरफास्फेट उर्वरक तथा कैडमियम युक्त जीवनाशी रसायनों के माध्यम से पर्यावरण में प्रवेश पाता है। चाहे कपड़ा धोने की मशीन हो या कि कुकर अथवा फ्रिज हो, सभी में कैडमियम प्लेटिंग रहती है अनुमान है कि मनुष्य के आहार के साथ प्रतिदिन 40 माइक्रोग्राम कैडमियम प्रविष्ट होता है। जापान में 'इटाइ-इटाइ' रोग कैडमियम की ही विषाक्तता से होता है। हमारे देश में ही कैडमियम बैटरी बनाने वाले उद्योगों में प्रदूषण के कारण 4000 लोगों की मृत्यु हो चुकी है। मनुष्य में कैडमियम की कुल मात्रा 30 मि.ग्रा. होती है जिसका 1/2 अंश वृक्कों में और 1/6 अंश यकृत में रहता है। प्रदूषण की स्थिति में यकृत में कैडमियम की मात्रा बढ़ती जाती है किन्तु वृक्कों में इसकी मात्रा आयु के अनुसार बढ़ती है इसकी विषाक्तता से पथरी पड़ जाती है। इसका विषैला प्रभाव इंजाइम के सल्फा-हिड्रिल समूह पर पड़ता है। सिगरेट पीने वालों के शरीर कैडमियम की अधिक मात्रा पायी गयी है। इसकी विषाक्तता से तनाव तथा हृदय रोग बढ़ते हैं।

लैड या सीसा एक संचयी विष है। दैनिक मात्रा थोड़ी होने पर भी लम्बे समय में सीसे का काफी संचय हो जाता है। यह पात्रों, मिट्टी और पानी के पाइपों से पर्यावरण में आता है। अनुमान है कि प्रतिदिन भोजन के द्वारा मनुष्य को 0.2-0.25 मि.ग्रा. सीसा मिलता है। जल के माध्यम से प्रतिलीटर 0.1 मि.ग्रा. सीसा शरीर के भीतर पहुँचता है। मृदु तथा अम्लीय जल में यह मात्रा अधिक हो सकती है। 1977 में आन्ध्रप्रदेश के गुंटूर जिले के मलप्पाडु नामक ग्राम के मवेशी इस बीमारी से ग्रसित हुये थे। मवेशियों को यह बीमारी सीसा मिले रसायनों से प्रदूषित जल पीने के कारण हुयी थी। हुआ यह था कि उपर्युक्त ग्राम के निकट की नदी में एक रासायनिक कारखाने द्वारा उक्त रसायन छोड़ दिये जाते थे और मवेशी इस नदी का जल पिया करते थे फलतः, कई पशुओं की जानें चली गयीं। शहरों में वाहनों के पेट्रोल से निकला सीसा वायुमंडल में व्याप्त रहता है। इंजनों की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिये पेट्रोल में लैड के रसायन (यथा टेट्रा इथाइल लैड) मिला दिये जाते हैं। यह सीसा श्वॉस द्वारा शरीर में प्रविष्ट होता रहता है। सीसे की विषाक्तता से उल्टी, अरक्तता, गठिया आदि रोग हो जाते हैं। प्राचीन रोम के निवासी सीसा से कलई किये गये वर्तनों का अधिक उपयोग करते थे इसके कारण उनके शरीर में सीसा की इतनी अधिक विषाक्तता हो गयी थी कि कम आयु में ही उनकी मृत्यु हो जाती थी।

एल्यूमीनियम का सर्वाधिक प्रयोग नित्य प्रति व्यवहार में आने वाले बर्तनों के बनाने में होता है। यदि पीने के पानी में फ्लोराइड मिला हो तो ऐसे बर्तनों में से पर्याप्त एल्यूमीनियम शरीर के भीतर प्रविष्ट हो सकता है। इसकी अधिकता से मस्तिष्क कोशिकाओं को क्षति पहुँचती है। क्रोमियम, निकेल धातुओं

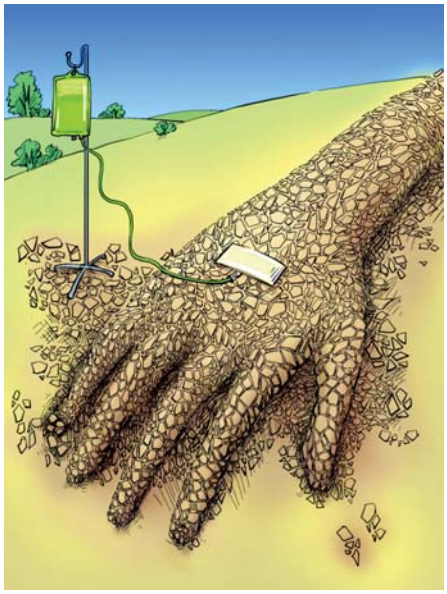

कैडमियम भी एक विषैली भारी धातु है। यह खनन, धातुकर्म, रसायन उद्योग, सुपरफास्फेट उर्वरक तथा कैडमियम युक्त जीवनाशी रसायनों के माध्यम से पर्यावरण में प्रवेश पाता है। चाहे कपड़ा धोने की मशीन हो या कि कुकर अथवा फ्रिज हो, सभी में कैडमियम प्लेटिंग रहती है अनुमान है कि मनुष्य के आहार के साथ प्रतिदिन 40 माइक्रोग्राम कैडमियम प्रविष्ट होता है। जापान में 'इटाइ-इटाइ' रोग कैडमियम की ही विषाक्तता से होता है।

से संबंधित कारखानों में काम करने वाले मनुष्यों में चर्म तथा श्वास नली के कैंसर होते देखे गये हैं।

क्रोमियम अनेक ऑक्सीकरण अवस्थाओं में पाया जाता है किन्तु Cr (III) एवं Cr (VI) पर्यावरण में अधिक पाया जाता है। पर्यावरण में क्रोमियम का व्यवहार इसकी ऑक्सीकरण अवस्था के कारण है। Cr (VI) यौगिक मिट्टी/जल में चलायमान(mobile) हैं तथा विभिन्न प्रकार के जीवों के लिए विषैले हैं। Cr (VI) यौगिक अत्यधिक घुलनशील हैं जबकि त्रिसंयोजी क्रोमियम उदासीन पी.एच. पर अक्रिय अवच्छेप बनाते है। पर्यावरणीय दृष्टि से षष्ठ संयोजी क्रोमियम ही महत्वपूर्ण है। यह कोशिका विषाक्तता, जीन विषाक्तता तथा कैंसर कारकता हेतु उत्तरदायी है। आर्सेनिक एक संचयी तथा जीव द्रव्यीय (प्रोटोप्लाज्मिक)

पारिस्थितिक-तंत्र में अवांछित परिवर्तन से यह स्पष्ट हो चुका है कि विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों, विशेष रूप से भारी धातुओं द्वारा भूमि और जल संसाधनों की गुणवत्ता में गिरावट आयी है। ये भारी धातुएं विभिन्न उद्योगों के अपशिष्टों, वाहनों के उत्सर्जन तथा कृषि में उर्वरकों, पीड़कनाशियों के अत्यधिक एवं अविवेकपूर्ण इस्तेमाल से मृदा एवं जल-स्रोतों तक पहुँचती हैं।

विष है जो इंजाइमों के सल्फहिड्रिल समूहों को अवरूद्ध करता है। आर्सेनिक का शोषण चमड़ी तथा फेफड़ों से होता है। यह कैन्सर जनक माना जाता है। यह जीवनाशी रसायनों के प्रयोग से पर्यावरण में आता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि ये भारी धातुयें कितनी अधिक विषैली हैं। शहरी गंदे जल (सीवेज-स्लज) से सींची गयी मृदाओं में उपजने वाली फसलों में कैडमियम की उच्च मात्रायें पायी जा सकती हैं। अतएव पौधे तथा फसलें कम से कम कैडमियम ग्रहण करें, इस दिशा में शोध की आवश्यकता बनी हुयी है।

फायटोरेमेडियेशन धात्विक प्रदूषण निवारण की एक नवीन हरित तकनीक है जिसमें भारी धातुओं का संचय करने वाले पौधों का उपयोग किया जाता है, फायटोरेमेडियेशन मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों के अतिरिक्त भारी धातु के स्तर और विशेषताओं, धातु संचय करने वाले पौधों की प्रजातियों तथा जलवायु परिस्थितियों पर निर्भर करता है। पौधे विभिन्न धातुओं को घुलनशील ऑक्सीकरण अवस्था से अघुलनशील ऑक्सीकरण में परिवर्तित करके धातु निक्षालन को रोकते हैं। साथ ही उन्हें उद्ग्रहण, अवक्षेपण और अपचयन के माध्यम से निश्चल किया जा सकता है।

पौधे अपनी जड़ों की सतह में उपस्थित सूक्ष्मजीवों की विघटनकारी प्रक्रिया के द्वारा कार्बनिक यौगिकों को तोड़कर सरलीकृत कर देते हैं और इसे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। इन उपचारित पौधों को प्रदूषित स्थल से दूर ले जाकर विभिन्न विधियों द्वारा संचयित तत्वों को इनसे अलग कर लिया जाता है। जैव प्रौद्योगिकी की सहायता से इस समय ऐसी विधियां विकसित कर ली गई है जिनके द्वारा चुने हुए तथा विशेष रूप से निर्मित सूक्ष्मजीवों के प्रयोग से पौधों द्वारा धातुओं का अवशोषण बढ़ाकर मृदा पुनः कृषि योग्य बनाई जा सकती है।

यह देखा जा रहा है कि स्वच्छ जल के अभाव में लोग प्रदूषित जल को सिंचाई के उपयोग में ले रहे हैं। भारी धातुओं युक्त प्रदूषित जल से कृषि भूमि की सिंचाई के रूप में उपयोग बढ़ता जा रहा है। यह पोषक तत्वों का एक सस्ता स्रोत माना जाता है लेकिन अनुपचारित औद्योगिक अपशिष्ट (सीवेज-स्लज) से सिंचाई करने पर भारी धातुओं की सांद्रता में वृद्धि हुई है। पौधे प्रदूषित पदार्थों के लिए एक जैविक छनन-यंत्र का कार्य करते हैं। पौधे प्रदूषणकारी पदार्थों सांद्रता को अपनी बाहरी या भीतरी सतह पर सोखकर इनको कम विषैले पदार्थों में परिवर्तित कर, स्वयं में एकत्रित कर व चयापचय द्वारा उनकी मात्रा को कम कर देते हैं।

धात्विक प्रदूषण को कम करने हेतु यद्यपि कई तकनीकें विकसित की जा चुकी हैं, तथापि अत्यधिक महंगी तथा कभी-कभी प्रायोगिक रूप से उपयोगी न होने के कारण इनको प्रत्येक स्थान पर प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में पौधों के प्रयोग द्वारा इन धातुओं का निस्तारण एक सरल, सस्ती और आसान प्रक्रिया सिद्ध हो सकती है। विशेषकर पर्यावरणीय दृष्टिकोण से यह एक अनुकूल विधि है। इसमें अतिरिक्त हानिकारक उत्पादों की संभावना काफी कम होती है।

फायटोरेमेडियेशन आधारित निस्तारण के लिए सबसे पहली आवश्यकता प्रदूषणकारी भारी धातुओं को पहचानने की है। इसके लिए जैव-सूचकों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ फेस्चुका रूब्रा तथा लिगुस्टम वुलगेरी की पत्तियॉ कैडमियम, जिंक, लैड और निकेल के लिए, डाइक्रेनम पॉलीसेटम तथा स्फैगनम प्रजातियां कैडमियम, कॉपर, ऑयरन, मरकरी, निकेल, लेड तथा जिंक के लिए प्रयुक्त होती हैं। सूचक पौधे भारी धातुओं की अधिक मात्रा अवशोषित करते हैं लेकिन इनकी प्रतिरोधक क्षमता कम होती हैं जिसके कारण रन्ध्र, क्यूटिकिल, ट्राइकोम आदि में परिलक्षित होने वाले परिवर्तन बाहर से स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगते हैं। कुछ शैवाल जैसे क्लेडोफोरा और स्टीमिआलोनियम का प्रयोग जल में भारी धातु प्रदूषण के सूचक के रूप में होता है। भारी धातु प्रदूषण की उपस्थिति में क्लेडोफोरा पूर्णतया उस स्थान से समाप्त होने लगता है।

प्रदूषण की पहचान हो जाने के पश्चात ऐसे पौधों का चुनाव किया जाता है जो इनके निस्तारण की क्षमता रखते हैं। निस्तारण की यह सफलता पौधों की जाति तथा मृदा सुधार की विधि पर काफी सीमा तक निर्भर करती है। कुछ पौधों के ऊतकों में काफी अधिक मात्रा में भारी धातुओं को संचित करने की शक्ति होती है और इन्हीं पौधों का उपयोग मृदा धातुओं का अवशोषण करने में किया जाता है। यह निस्तारण कई अन्य कारकों पर भी निर्भर करता है जैसे-पौधों की अधिक से अधिक मात्रा में भारी धातुओं को संचित करने की शक्ति होती है और इन्हीं पौधों का उपयोग मृदा धातुओं का अवशोषण करने में किया जाता है। यह निस्तारण कई अन्य कारकों पर भी निर्भर करता है जैसे-पौधों की अधिक से अधिक मात्रा में भारी धातुओं को एकत्रित करने की क्षमता, पर्याप्त मात्रा में जैव-भार का उत्पादन, रोपाई तथा कटाई की सरलता इत्यादि।

पारिस्थितिक-तंत्र में अवांछित परिवर्तन से यह स्पष्ट हो चुका है कि विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों, विशेष रूप से भारी धातुओं द्वारा भूमि और जल संसाधनों की गुणवत्ता में गिरावट आयी है। ये भारी धातुएं विभिन्न उद्योगों के अपशिष्टों, वाहनों के उत्सर्जन तथा कृषि में उर्वरकों, पीड़कनाशियों के अत्यधिक एवं अविवेकपूर्ण इस्तेमाल से मृदा एवं जल-स्रोतों तक पहुँचती हैं।

मृदा में फसल उत्पादन के लिए मुख्यतया सूक्ष्म तत्वों की आवश्यकता होती है। लेकिन कुछ भारी धातुएं सूक्ष्ममात्रा में पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक हैं जैसे- जिंक, निकेल, कॉपर व आयरन। कुछ मृदाओं में ये धातुएं अनुपस्थित होती हैं, इसलिए इनका पर्णीय छिड़काव किया जाता है तथा कुछ भारी धातुयें उर्वरकों में अशुद्ध रूप से पायी जाती हैं जैसे कैडमियम, लेड व मरकरी। भारी तत्वों के प्राकृतिक स्रोत से होती हुई ये धातुयें विभिन्न रूपों में परिवर्तित होती रहती हैं जिसके कारण इनके भौतिक व रासायनिक गुण भी परिवर्तित होते रहते हैं।

भारी धातुओं की सान्द्रता मृदा में से कम करने के लिए पौधों के उपयोग को फायटोरेमेडियेशन कहते हैं। पौधे मृदा में उपस्थित भारी धातुओं को ग्रहण करके उन्हें विभिन्न भागों में संचयित करते हैं। फायटोरेमेडियेशन शब्द का प्रयोग सबसे पहले डॉ. इत्या रासकिन, अमेरिका के एक वैज्ञानिक ने किया था। फायटोरेमेडियेशन दो शब्दों- फायटो अर्थात् पादप व रेमेडियेशन अर्थात सुधारना से मिलकर बना है।

हरे पौधों में मृदा में उपस्थित हानिकारक पदार्थों को अविषाक्त करने की विलक्षण क्षमता होती है। फायटोरेमेडियेशन एक

शैवालों तथा प्लवकों (प्लैंकटन) में इन धातुओं का बहुत अधिक संचय होता है अतः इन धातुओं के अस्थायी छुटकारे के लिये शैवालों तथा प्लवकों की खेती पर बल देने की आवश्यकता है। शोधों से पता चला है कि चीड़ का पेड़ मिट्टी से बेरीलियम अवशोषित कर उसे धातु प्रदूषण से मुक्त कर देने की सामर्थ्य रखता है। हेयुमैनिएस्ट्रम नामक वनस्पति जमीन से कॉपर एवं कोबाल्ट का अवशोषण करती है। क्रूसीफेरी परिवार की एक वनस्पति थ्लास्पी रोटण्डीफोलिया जस्ते और सीसे को वातावरण से अवशोषित करती है। इनमें इनकी मात्रायें 1.2% तक हो सकती हैं। इसी प्रकार सेम, मटर आदि के पौधे जमीन से मॉलिब्डिनम धातु को अवशोषित कर लेते हैं।

व मृदा में थोड़ा बहुत परिवर्तन करके भारी धातुओं को मृदा से अवशोषित कर लिया जाता है जिससे हानिकारक पदार्थ मृदा में कम हो जाते हैं।

यह देखा गया है कि शैवालों तथा प्लवकों (प्लैंकटन) में इन धातुओं का बहुत अधिक संचय होता है अतः इन धातुओं के अस्थायी छुटकारे के लिये शैवालों तथा प्लवकों की खेती पर बल देने की आवश्यकता है। शोधों से पता चला है कि चीड़ का पेड़ मिट्टी से बेरीलियम अवशोषित कर उसे धातु प्रदूषण से मुक्त कर देने की सामर्थ्य रखता है। हेयुमैनिएस्ट्रम नामक वनस्पति जमीन से कॉपर एवं कोबाल्ट का अवशोषण करती है। क्रूसीफेरी परिवार की एक वनस्पति थ्लास्पी रोटण्डी-फोलिया जस्ते और सीसे को वातावरण से अवशोषित करती है। इनमें इनकी मात्रायें 1-2% तक हो सकती हैं। इसी प्रकार सेम, मटर आदि के पौधे जमीन से मॉलिब्डिनम धातु को अवशोषित कर लेते हैं।

विश्व के मृदा वैज्ञानिक मृदा को प्रदूषण से मुक्त रखने के लिये निरन्तर प्रयोग करते रहै हैं। वाहित मल-जल (सीवेज-स्लज) से होने वाले प्रदूषण को कम करने के लिये भूमि पर बहाने से पूर्व इसका तनूकरण अनिवार्य है। सीवेज की 1%1000 तक के तनुता मृदा तथा पौधों के लिये सुरक्षित रहती है। वाहित मल जल जितनी ही अधिक दूरी से आता है, उसमें पाये जाने वाले प्रदूषकों की मात्रा भी क्रमशः घटती जाती है। मुख्य रूप से जैव-रासायनिक ऑक्सीजन मॉग (बी.ओ.डी.) की मात्रा घटकर 20 मिलीग्राम प्रति लीटर के लगभग हो जाती है। अर्थात् बी.ओ.डी. की (लोडिंग) मात्रा काफी घट जाती है जिससे सिंचाई हेतु जल की गुणवत्ता सुधर जाती है। मल-जल में उपस्थित नाइट्रोजन व फास्फोरस की मात्रा, पादप विषाक्तता, बी.ओ.डी. जैव विच्छेदनशीलता, भारी तत्व, विषैले कार्बनिक यौगिक लोडिंग रेट को प्रभावित करते हैं। 1000 मिलीग्राम प्रति लीटर या इससे कम बी.ओ.डी. वाले वाहित मल जल के लिये हाइड्रोलिक लोडिंग रेट भूमि उपचार के लिये उपयुक्त है।

मल-जल के उपचार के साथ-साथ औद्योगिक व्यर्थ पदार्थों का भी उपचार किया जाना आवश्यक है। अम्लीय वर्षा वाले क्षेत्रों में चूने का प्रयोग करना चाहिये। अन्यत्र कार्बनिक पदार्थ डाला जाना चाहिए। उर्वरकों की मात्रा घटा देनी चाहिए।

यदि दूषित मल जल को नदियों आदि जलस्रोतों में गिराने से पूर्व कृत्रिम जलाशयों में रोककर उसमें शैवालों और जलकुम्भी जैसे जलीय पौधों को उगाया जाये तो दूषित जल का शुद्धिकरण किया जा सकता है। कारखानों द्वारा निकलने वाले दूषित जल में कैडमियम, पारा,

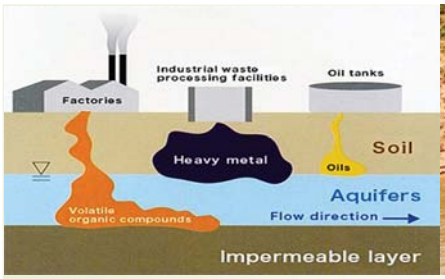

प्रत्येक स्रोत के मल-जल का विश्लेषण आवश्यक है। इन भारी धातुओं के अतिरिक्त भी मल-जल के एक गुण बी.ओ.डी. के निर्धारण की आवश्यकता है। मल-जल में जितनी ही गन्दगी होगी, मृदा के सम्पर्क में आने पर वह अपने विघटन के लिये मृदा से उतनी ही अधिक आक्सीजन ग्रहण करेगी। अतएव मृदा के वायुमण्डल में ऑक्सीजन की कमी हो सकती है जिससे बीजों के अंकुरण से लेकर अन्य क्रियायें एवं कुछ सूक्ष्मजीवी क्रियायें यथा-नाइट्रीकरण आदि लुप्त हो जायेंगी। जल में कितना ठोस पदार्थ है यह भी जानना आवश्यक है। इसको 'लोडिंग' कहते हैं। लगातार सिंचाई करते रहने से मृदा में काफी गहराई तक विषैले तत्वों का संचय हो जाता है।

निकेल जैसे भारी तत्वों की मात्राओं को जलकुम्भी अवशोषित कर लेती है। एक हैक्टेयर क्षेत्र में उगायी गयी जलकुम्भी 240,000 लीटर दूषित जल से 24 घंटे में लगभग 300 ग्राम निकेल तथा कैडमियम अवशोषित कर लेती है तथा 72 घंटे में लगभग 1.60 कि.ग्रा. फिनॉल अवशोषित करती है। जलकुम्भी द्वारा परिशोधित जल का पी.एच.मान 6.3 से 9.8 तक हो जाता है। इसी प्रकार यदि मल युक्त ठोस पदार्थ (स्लज) को चूर्ण शैल फास्फेट के साथ प्रयोग किया जाय तो भूमि तथा पौधे में भारी तत्वों के एकत्रित होने को रोका जा सकता है।

इस दिशा में नागपुर स्थित राष्ट्रीय पर्यावरण अभियान्त्रिकी संस्थान (नीरी) में महत्वपूर्ण शोध कार्य चल रहा है। बायोडिग्रेशन (जैव-विच्छेदन) की क्रिया मृदा को प्रदूषण युक्त रखने में काफी सहायक होती है। इसमें आक्सीकरण-अवकरण, खनिजीकरण, स्थिरीकरण, कार्बनिक अवयवों का निर्माण, जटिल क्रियायें आदि शामिल हैं। प्रत्येक क्रिया को भली प्रकार सम्पादित होने के लिये उपयुक्त वातावरण होना चाहिये जैसे कि मृदा नमी, मृदा-ताप, मृदा-वायु अनुकूल रहे।

मृदा प्रदूषण से बचने या प्रदूषण कम करने के लिये कुछ अन्य उपाय सुझाये गये हैं- जैसे कूड़ा करकट को जला देना, उसकी कम्पोस्ट बनाना, बायोगैस बनाना, पशुचारा बनाना आदि। मृदा वैज्ञानिकों की दृष्टि में मृदा में जैव-अंश की मात्रा बढ़ाकर जीवनाशी विषालुता नियन्त्रित की जा सकती है। इसी प्रकार अम्लीय मिट्टियों में चूने का प्रयोग करके नाभिकीय विघटन उत्पाद स्ट्रांशियम (Sr) के अवशोषण को रोका जा सकता है।

अवमल का खाद के रूप में लगातार प्रयोग मृदा प्रदूषण के लिये उत्तरदायी है। अतः अवमल को प्रयोग करने से पूर्व उसका प्राथमिक उपचार अत्यावश्यक है। इसके लिये अवमल में चूना ($CaC0_3$) मिलाकर अन्योन्य-क्रिया द्वारा भारी तत्वों की विषाक्तता कम की जा सकती है। मसूरी रॉक फॉस्फेट के प्रयोग से भी अवमल में उपस्थित भारी तत्वों का विषैला प्रभाव कम किया जा सकता है। मसूरी रॉक फॉस्फेट के प्रयोग से भी अवमल में उपस्थित भारी तत्वों का विषैला प्रभाव कम किया जा सकता है।

यह देखा गया है कि यद्यपि सीसा के कारण पत्तीदार फसलों को वृद्धि एवं भार पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता किन्तु उनके द्वारा अवशोषित सीसा की मात्रा काफी बढ़ जाती है। वस्तुतः चाहे कैडमियम हो या सीसा या क्रोमियम-इनकी अवशोषित मात्रायें सब्जियों के अनुसार घटती बढ़ती हैं। इसलिये हर फसल के लिये यह मात्रा ज्ञात की जानी चाहिए जिसके ऊपर घातक सिद्ध हो। तब इनको खाने के काम में लाना चाहिए।

इसी तरह प्रत्येक स्रोत के मल-जल का विश्लेषण आवश्यक है। इन भारी धातुओं के अतिरिक्त भी मल-जल के एक गुण बी.ओ. डी. के निर्धारण की आवश्यकता है। मल-जल में जितनी ही गन्दगी होगी, मृदा के सम्पर्क में आने पर वह अपने विघटन के लिये मृदा से उतनी ही अधिक आक्सीजन ग्रहण करेगी। अतएव मृदा के वायुमण्डल में ऑक्सीजन की कमी हो सकती है जिससे बीजों के अंकुरण से लेकर अन्य क्रियायें एवं कुछ सूक्ष्मजीवी क्रियायें यथा-नाइट्रीकरण आदि लुप्त हो जायेंगी। जल में कितना ठोस पदार्थ है यह भी जानना आवश्यक है। इसको 'लोडिंग' कहते हैं। लगातार सिंचाई करते रहने से मृदा में काफी गहराई तक विषैले तत्वों का संचय हो जाता है।

औद्योगिक अपशिष्ट हो या मल-जल या अवमल- इनके निपटान की विधियों पर विदेशों में कार्य चल रहा है। हमें भी अपने देश में दीर्घकालीन प्रयोग वाले मॉडल तैयार करने होंगे। मृदा पर्यावरण का एक ऐसा घटक है जो सभी प्रकार के प्रदूषणों को अपने में समाहित करती रहती है। अतः पर्यावरण प्रदूषण को रोकने वाला कोई भी प्रयास मृदा प्रदूषण को रोकने में सहायक होगा। तात्पर्य यह है कि यदि पर्यावरण स्वच्छ हो तो मृदा भी स्वच्छ रहेगी। कितना अच्छा हो यदि मृदा को प्रदूषित ही न होने दिया जाय। किन्तु यह मृदा के सीमित उपयोग से ही सम्भव है। यदि स्थानीय रूप से मृदा प्रदूषित हो जाय तो उसके तुरन्त उपचार की आवश्यकता है।

dineshmanidsc@gmail.com

ब्रह्मांड की उत्पत्ति

कब और कैसे

प्रदीप

प्रदीप एक साइंस ब्लॉगर एवं विज्ञान संचारक हैं। ब्रह्मांड विज्ञान, विज्ञान के इतिहास और विज्ञान की सामाजिक भूमिका पर लोकोपयोगी लेख लिखने में विशेष रूचि है। ज्ञान-विज्ञान से संबंधित आपके लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

महान यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने कहा था कि मनुष्य स्वभावतः जिज्ञासु है तथा उसकी सबसे बड़ी इच्छा ब्रह्मांड की व्याख्या करना है। ब्रह्मांड का विकास इस प्रकार से हुआ है कि समय के साथ इसमें ऐसे जीव (मनुष्य) उपजें जो अपनी उत्पत्ति के रहस्य को जानने में समर्थ थे। ब्रह्मांड की उत्पत्ति कब और कैसे हुई? क्या यह सदैव से अस्तित्व में था या इसका कोई प्रारम्भ भी था? इसकी उत्पत्ति से पूर्व क्या था? क्या इसका कोई जन्मदाता भी है? यदि ब्रह्मांड का कोई जन्मदाता है तो पहले ब्रह्मांड का जन्म हुआ या उसके जन्मदाता का? यदि पहले ब्रह्मांड का जन्म हुआ तो उसके जन्म से पहले उसका जन्मदाता कहाँ से आया? इस विराट ब्रह्मांड की मूल संरचना कैसी है - ये कुछ ऐसे मूलभूत प्रश्न हैं जो आज भी उतने ही प्रासंगिक है जितने सदियों पूर्व थे। ब्रह्मांड की उत्पत्ति से संबंधित इन मूलभूत प्रश्नों में धर्माचर्यों, दार्शनिकों और वैज्ञानिकों की दिलचस्पी रही है। इन प्रश्नों के उत्तर सीमित अवलोकनों, आलंकारिक उदाहरणों, मिथकों, रूपकों एवं आख्यानों के आधार पर प्रस्तुत करने के प्रयास प्रायः सभी प्राचीन सभ्यताओं एवं धर्मों में हुए। अधिकांश धर्मों मे ब्रह्मांड के रचयिता के रूप में ईश्वर की परिकल्पना भी की गई।

हिन्दू धर्म की मान्यताओं के अनुसार ब्रह्मा ने ब्रह्मांड का निर्माण किया था। ब्रह्मांड की उत्पत्ति की विचारधारा का वर्णन ऋग्वेद के एक सृजन स्रोत से मिलती है, जिसे नासदीय सूक्त कहते हैं। यह सूक्त वैदिक सोच की पराकाष्ठा को दर्शाती है। इसमें वैदिक ऋषि कह रहे हैं कि 'प्रलयकाल में पंच-महाभूत सृष्टि का अस्तित्व नहीं था और न ही असत् का अस्तित्व था। उस समय भूलोक, अंतरिक्ष तथा अन्तरिक्ष से परे अन्य लोक नहीं थे। सबको आच्छादित करने वाले (ब्रह्मांड) भी नहीं थे। किसका स्थान कहाँ था? अगाध और गम्भीर जल का भी अस्तित्व कहाँ था?'

सूक्त के अंत में संदेहवादी ऋषि कहता है कि - 'यह सृष्टि किससे उत्पन्न हुई, किसलिए हुई, वस्तुतः कौन जानता है? देवता भी बाद में पैदा हुए, फिर जिससे यह सृष्टि उत्पन्न हुई, उसे कौन जानता है?

किसने विश्व को बनाया और कहाँ रहता है, इसे कौन जानता है? सबका अध्यक्ष परमाकाश में है। वह शायद इसे जानता है। अथवा वह भी नहीं जानता।

ऋग्वेद के नासदीय सूक्त से यह प्रतीत होता है कि एक नियत समय पर ब्रह्मांड की उत्पत्ति हुई थी। मगर हिन्दू धर्म में ब्रह्मांड की उत्पत्ति की विचारधाराएं विरोधाभासी हैं क्योंकि वेदों, पुराणों में जो आख्यान मिलते हैं, उनमे ब्रह्मांड की उत्पत्ति से पहले के भी आख्यान हैं, इसके खत्म होने के बाद के भी। इसलिए हिन्दू धर्म में मानते हैं कि ब्रह्मांड अनादि-अनंत है, इसका न कोई शुरूआत है और

दो प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिकों प्लेटो और अरस्तु ने ब्रह्मांड की प्रकृति से सम्बन्धित ऐसे विचार रखें जो 2000 से भी अधिक वर्षों तक कायम रहें। अरस्तु ने यह सिद्धांत दिया था कि पृथ्वी विश्व (ब्रह्मांड) के केंद्र में स्थिर है तथा सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह और तारे वृत्ताकार कक्षाओं में पृथ्वी के चारों ओर घूमते हैं। अरस्तु के इसी विचार को आधार बनाकर दूसरी शताब्दी में टॉलेमी द्वारा ब्रह्मांड का भूकेंद्री मॉडल प्रस्तुत किया गया।

न ही अंत। इसमें सृष्टि सृजन से पहले की भी कहानी होगी और अंत होने के बाद भी, इसलिए कोई एक समय नहीं है - सृष्टि सृजन का!

दूसरी तरफ यहूदी, इस्लाम, ईसाई एवं अन्य कई धर्मों के लोगों का मानना है कि ब्रह्मांड की आवश्यक रूप से एक शुरुवात होनी चाहिए। इनका मानना है कि दुनिया एक दिन शुरू हुई थी और एक दिन खत्म हो जाएगी ; इसे बाइबिल में एपोकलिप्स कहा गया है। वहीं अरस्तु एवं अन्य यूनानी दार्शनिकों की धारणा थी कि यह संसार सदैव से अस्तित्व में था तथा सदैव ही अस्तित्व में रहेगा।

ब्रह्मांड की उत्पत्ति कब और कैसे हुई, इस चुनौती को स्वीकार करने में वैज्ञानिक हाल ही में समर्थ हुए हैं। पिछली सदी के दौरान वैज्ञानिकों ने ब्रह्मांड की उत्पत्ति कैसे हुई, इस प्रश्न के उत्तर स्वरूप अनेक मनोमुग्धकारी सिद्धांत प्रतिपादित किये हैं, जो सृष्टि सृजन को समझाने का प्रयास करते हैं। इन वैज्ञानिक सिद्धांतों पर चर्चा करने से पहले आइये प्रारंभिक खगोलिकी के रोमांचक सफ़र पर एक नज़र डालते हैं।

खगोलशास्त्र की शुरुवाती अवधारणाएं

दो प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिकों प्लेटों और अरस्तु ने ब्रह्मांड की प्रकृति से सम्बन्धित ऐसे विचार रखें जो 2000 से भी अधिक वर्षों तक कायम रहें। अरस्तु ने यह सिद्धांत दिया था कि पृथ्वी विश्व (ब्रह्मांड) के केंद्र में स्थिर है तथा सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह और तारे वृत्ताकार कक्षाओं में पृथ्वी के चारों ओर घूमते हैं। अरस्तु के इसी विचार को आधार बनाकर दूसरी शताब्दी में टॉलेमी द्वारा ब्रह्मांड का भूकेंद्री मॉडल प्रस्तुत किया गया। हालाँकि प्राचीन भारत के महान वैज्ञानिक आर्यभट ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और खगोल स्थिर है। उनकी यह मान्यता पौराणिक धारणा के विपरीत थी। इसलिए बाद के खगोलशास्त्रियों ने उनकी इस सही मान्यता को स्वीकार नहीं किया। वैसे दिलचस्प बात यह है कि जब दुराग्रही वेदान्तियों द्वारा आर्यभट की इस मान्यता का विरोध किया जा रहा था, तब यूरोप में निकोलस कोपरनिकस सूर्य केंद्री मॉडल प्रस्तुत कर रहे थे। कोपरनिकस द्वारा एक आसान मॉडल प्रस्तुत किया गया जिसमे यह बताया गया था कि पृथ्वी व अन्य ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। वैसे आर्यभट ने यह जरूर बताया था कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है, परंतु वे यह नहीं बता पाए थे कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है।

जिस समय कोपरनिकस ने सूर्य केंद्री मॉडल प्रस्तुत किया था, उस समय पूरे विश्व में टॉलेमी के मॉडल का ही बोलबाला था। चूँकि टॉलेमी और अरस्तु के मॉडल को धार्मिक रूप से भी अपना लिया गया था, इसलिए चर्च ने कोपरनिकस के सिद्धांत को प्रचारित तथा प्रसारित करने पर रोक लगा दिया। बाद में किसी तरह एक रोमन प्रचारक ज्योदार्न ब्रूनो को कोपरनिकस के सिद्धांत के बारे में पता चला। उसने कोपरनिकस के मॉडल का अध्ययन किया तथा समर्थन भी। ब्रूनो द्वारा कोपरनिकस के सिद्धांत का समर्थन रोमन धर्म न्यायाधिकरण को धर्म विरुद्ध नज़र आया, इसलिए उन्होंने ब्रूनो को रोम में जिन्दा जला दिया!

कोपरनिकस और ब्रूनों के बाद दुनिया के अलग-अलग कोनों में खगोलिकी के क्षेत्र में अनेक खोजे हुईं। जर्मनी के जोहांस केप्लर ने ग्रहों के गतियों का सही स्पष्टीकरण अपने तीन नियमों के आधार पर प्रस्तुत किया। इटली के वैज्ञानिक गैलीलियो ने दूरबीन का उपयोग खगोलविज्ञान के क्षेत्र में किया तथा कई महत्वपूर्ण खोजें की। इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक आइजक न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत तथा गति के तीन नियमों की खोज की।

रात अंधेरी क्यों ?

वर्ष 1826 में वियना के एक चिकित्सक ओल्बर्स ने एक प्रश्न उठाया कि रात में आकाश अंधकारपूर्ण क्यों रहता है? ओल्बर्स ने यह माना कि ब्रह्मांड अनादि है और अनंत रूप से विस्तृत है तथा तारों से समान रूप से भरा हुआ है। यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि इन सभी तारों से हमें कुल कितना प्रकाश प्राप्त होना चाहिए? दूर स्थित तारा अधिक प्रकाश नहीं भेज सकता है क्योंकि भौतिकी का यह नियम है कि कोई भी प्रकाशवान वस्तु प्रेक्षक से जितनी अधिक दूर होती है, उससे आनेवाला प्रकाश उतना ही कम मिलता है। परन्तु जितना अधिक दूर हम देखते है, उतने ही अधिक तारे हमे दिखाई देते हैं तथा उनकी संख्या इस दूरी के वर्ग के अनुपात में बढती जाती है। ये दोनों ही प्रभाव एक दूसरे को निष्फल कर देते हैं। अतः एक निश्चित दूरी पर स्थित तारे कुल मिलकर हमे एक जैसा ही प्रकाश देते हैं फिर चाहें वे पास हों या दूर! इससे चिकित्सक ओल्बर्स ने यह निष्कर्ष निकाला कि चूँकि तारे असीमित दूरी तक फैले हुए हैं इसलिए हम तक पहुंचने वाला उनका सम्मिलित प्रकाश भी असीमित होगा। दूसरे शब्दों में सूर्य चाहें हो या न हो, चाहें रात हो या दिन हो आकाश असीमित रूप से प्रकाशमान होना चाहिए। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है क्योंकि यदि आकाश इतना अधिक प्रकाशमान होता तो हमारा अस्तित्व ही नहीं होता। मगर ओल्बर्स ने भी सामान्य तर्कों तथा गणित की सहायता से यह सिद्ध कर दिया कि रात्रि आकाश अंधकारमय होने की बजाय अत्यधिक मात्रा में प्रकाशवान होना चाहिए। इस गणना को ओल्बर्स विरोधाभास के नाम से जाना जाता है। उस समय के वैज्ञानिकों को स्पष्ट रूप से लगा कि ओल्बर्स के इस तर्क में कोई न कोई गलती अवश्य है। परंतु गणितीय दृष्टि से मजबूत होने के कारण उस समय ओल्बर्स के विवेचन में कोई भी गलती नहीं निकाली जा सकी। आधुनिक ब्रह्मांड विज्ञान ने ओल्बर्स के विवेचन में क्या त्रुटि निकाली, इसकी चर्चा हम बाद में करेंगे।

स्थिर ब्रह्मांड की अवधारणा

जब हम आकाश की ओर देखतें हैं तो हमे आकाश में न तो फैलाव दिखाई पड़ता है और न ही सिकुड़न तब हम उस स्थिति में आकाश

को स्थिर आकाश कह सकते हैं। इस स्थिति में कोई भी विचारशील व्यक्ति यही मानेगा कि ब्रह्मांड का आकार सीमित है तथा इसका कुल द्रव्यमान निश्चित है, इसलिए ब्रह्मांड समय के साथ अपरिवर्तित (स्थिर) है।

महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टाइन का भी पहले यही मानना था कि ब्रह्मांड स्थिर, शाश्वत एवं सीमित है। मतलब उनका यह मानना था कि ब्रह्मांड हमेशा से ऐसा रहा है और सदैव ही ऐसा रहेगा। यद्यपि आइन्स्टाइन के ही सामान्य सापेक्षता सिद्धांत से यह स्पष्ट हो रहा था कि दिक्-काल या तो सिकुड़ेगा या फिर फैलेगा, मगर स्थिर नहीं रहेगा। आइन्स्टाइन को अपने ही सिद्धांत में स्थिर ब्रह्मांड के पक्ष में संकेत न मिलने के बावजूद उसके समर्थन में अपने ही समीकरणों को संशोधित करते हुए उसमें उन्होंने एक पद जोड़ा, जिसे ब्रह्मांडीय नियतांक कहते हैं। दरअसल आइन्स्टाइन ने एक विरोधी गुरुत्वाकर्षण बल की कल्पना की थी। जहाँ प्रत्येक गुरुत्वाकर्षण बल का कोई न कोई स्रोत होता है वहीं आइन्स्टाइन द्वारा कल्पित विरोधी गुरुत्वाकर्षण बल का कोई खास स्रोत नहीं था, बल्कि वह दिक्-काल का एक अंतर्निहित अंग था जिसकी प्रकृति और प्रवृत्ति ब्रह्मांड को संकुचित होने से रोकने एवं स्थिरता प्रदान करने की थी।

आइन्स्टाइन के विचारों से रुसी वैज्ञानिक अलक्जेंडर फ्रीडमैन सहमत नहीं थे। उन्होंने वर्ष 1922 में अपने सैद्धांतिक खोजों के आधार पर यह पता लगाया कि ब्रह्मांड के बारे में हमें यह अपेक्षा नहीं करनी चाहिए कि वह स्थिर है। वस्तुतः उन्होंने ब्रह्मांड के गतिशील होने की बात रखी!

फ्रीडमैन ने दो महत्वपूर्ण तर्क प्रस्तुत किए। पहला यह कि ब्रह्मांड हर तरफ, हर दिशा में एक जैसा दिखाई देता है और दूसरा यह कि ब्रह्मांड किसी भी स्थान से देखने पर एक जैसा दिखाई देता है। फ्रीडमैन के ब्रह्मांडीय मॉडल की दो अवस्थाएं हैं। पहली यह है कि आकाशगंगाएं धीरे-धीरे एक दूसरे से दूर होते जाते हैं परंतु कुछ देर बाद गुरुत्वाकर्षण बल उन्हें एक-दूसरे से दूर जाने से रोक देता है, तब ये निकट आने लगते हैं इसके कारण फैलाव के स्थान पर संकुचन होगा। दूसरी अवस्था यह है कि आकाशगंगाएं इतनी तीव्र गति से एक दूसरे से दूर होती जा रही हैं कि गुरुत्वाकर्षण बल उन्हें दूर जाने से रोक नहीं पायेगा, परिणामस्वरूप ब्रह्मांड हमेशा फैलता ही रहेगा।

जिस समय फ्रीडमैन ने उपरोक्त तर्क रखें, उस समय आइन्स्टाइन तथा अन्य वैज्ञानिकों ने उनके तर्कों की उपेक्षा की। लेकिन एडविन हब्बल ने एक ऐसी खोज की कि वैज्ञानिकों को इस बात का ज्ञान हो गया कि ब्रह्मांड स्थिर नहीं है, बल्कि गतिशील है। आइए, उस क्रांतिकारी खोज की चर्चा करते हैं।

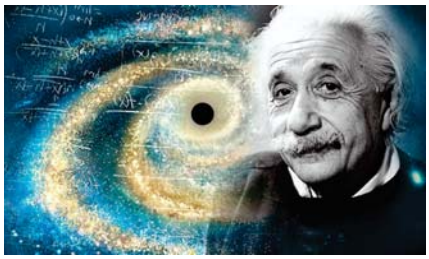

महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टाइन का भी पहले यही मानना था कि ब्रह्मांड स्थिर, शाश्वत एवं सीमित है। मतलब उनका यह मानना था कि ब्रह्मांड हमेशा से ऐसा रहा है और सदैव ही ऐसा रहेगा। यद्यपि आइन्स्टाइन के ही सामान्य सापेक्षता सिद्धांत से यह स्पष्ट हो रहा था कि दिक्-काल या तो सिकुड़ेगा या फिर फैलेगा, मगर स्थिर नहीं रहेगा। आइन्स्टाइन को अपने ही सिद्धांत में स्थिर ब्रह्मांड के पक्ष में संकेत न मिलने के बावजूद उसके समर्थन में अपने ही समीकरणों को संशोधित करते हुए उसमें उन्होंने एक पद जोड़ा, जिसे ब्रह्मांडीय नियतांक कहते हैं।

फैलता हुआ ब्रह्मंड

बीसवी सदी के प्रारम्भ में कोई भी वैज्ञानिक नहीं जानता था कि तारों से परे ब्रह्मांड का विस्तार कहाँ तक है। वर्ष 1920 में खगोलविदों द्वारा एक अन्तर्राष्ट्रीय विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें ब्रह्मांड के विस्तार एवं आकार पर चर्चा होनी थी। हार्लो शेप्ली तथा बहुसंख्य खगोलविद इस मत के पक्ष में थे कि सम्पूर्ण ब्रह्मांड का विस्तार हमारी आकाशगंगा तक ही सीमित है। दूसरी तरफ हेबर क्यूर्टिस तथा कुछ थोड़े से लोगों का मानना था कि हमारी आकाशगंगा की ही तरह ब्रह्मांड में दूसरी भी आकाशगंगाएं हैं, जो हमारी आकाशगंगा से अलग अस्तित्व रखती हैं। जैसा कि बड़ी-बड़ी विचार गोष्ठियों में होता है, इस बैठक में भी बहुमत का ही पलड़ा भारी रहा।

परंतु वर्ष 1924 में एडविन हब्बल तथा उनके सहयोगियों ने माउंट विल्सन वेधशाला की दूरबीन से यह सिद्ध कर दिया कि इस विराट ब्रह्मांड में हमारी आकाशगंगा की तरह लाखों अन्य आकाशगंगाएं भी हैं। अतः हब्बल के प्रेक्षणों ने क्यूर्टिस के दृष्टिकोण को सही सिद्ध कर दिया। मगर, हब्बल के निरीक्षण के अन्य निष्कर्ष क्यूर्टिस की कल्पना से भी परे के थे। दरअसल वर्ष 1929 में हब्बल ने यह भी खोज की कि दूर की आकाशगंगाओं से प्राप्त होने वाले प्रकाश की तरंग-लंबाई में एक नियमित वृद्धि है। डॉप्लर प्रभाव के अनुसार जब एक प्रकाश स्रोत हमसे दूर जाता है, तो उससे प्राप्त होने वाले प्रकाश की तरंग-लंबाई में ऐसी ही वृद्धि दिखाई देती है। चूँकि एक सामान्य वर्णक्रम में अधिकतम तरंग-लंबाई लाल रंग और न्यूनतम तरंग-लंबाई नीले-बैंगनी रंग से प्रदर्शित होता है, इसलिए हब्बल द्वारा प्राप्त वर्णक्रम को लाल विचलन कहते हैं। अतः हब्बल ने अपने इस प्रेक्षण से यह निष्कर्ष निकाला कि दूरस्थ आकाशगंगाएं हमसे दूर भाग रही हैं। हब्बल ने यह भी सिद्ध किया कि आकाशगंगाएं जितनी अधिक दूर है, उनकी दूर जाने का वेग भी उतना ही अधिक है। हब्बल ने इसी आधार पर कहा कि सम्पूर्ण ब्रह्मांड प्रसारमान है, फ़ैल रहा है!

जैसाकि हम जानते हैं कि आइन्स्टाइन के सामान्य सापेक्षता सिद्धांत का स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष था कि ब्रह्मांड सिकुड़ेगा या फैलेगा, मगर स्थिर नहीं रहेगा। वर्ष 1927 में जब जार्ज लेमाइत्रे ने सामान्य सापेक्षता के इन निष्कर्षों को आइन्स्टाइन को बताया तो उनकी प्रतिक्रिया थी : 'लेमाइत्रे, तुम्हारी गणित तो ठीक है परंतु भौतिकी बहुत बुरी।' आइन्स्टाइन स्थिर ब्रह्मांड के कट्टर पक्षधर थे। परंतु हब्बल की खोज ने सदियों पुरानी उस मान्यता को भी नकार दिया जिसके अनुसार ब्रह्मांड शाश्वत एवं स्थिर है। हब्बल की खोज के बाद आइन्स्टाइन ने कहा कि ब्रह्मांड को स्थिर बनाने के लिए अपने समीकरणों में ब्रह्मांडीय नियतांक को जोड़ना उनके जीवन की सबसे बड़ी भूल थी।

अब वियना के चिकित्सक ओल्बर्स के विरोधाभास पर चर्चा करते हैं। जैसाकि सदियों के प्रेक्षण और हमारा अस्तित्व यह सिद्ध कर रहे थे कि आकाश इतना अधिक प्रकाशमान नहीं हो सकता। तो प्रश्न यह है कि ओल्बर्स के गणनाओं में क्या गलती थी? इसका संक्षिप्त उत्तर है : उन्हें

ब्रह्मांड की उत्पत्ति का यह एक नया सिद्धांत है। इस सिद्धांत के अनुसार हमारा ब्रह्मांड करोड़ों वर्षों के अंतराल में विस्तृत और संकुचित होता रहता है। डॉ. एलन संडेज इस सिद्धांत के प्रवर्तक हैं। उनका मानना है कि आज से 120 करोड़ वर्ष पहले एक तीव्र विस्फोट हुआ था और तभी से ब्रह्मांड फैलता जा रहा है। 290 करोड़ वर्ष बाद गुरुत्वाकर्षण बल के कारण इसका विस्तार रुक जाएगा। इसके बाद ब्रह्मांड संकुचित होने लगेगा और अत्यंत संपीडित और अनंत रूप से बिंदुमय आकार धारण कर लेगा, उसके बाद एक बार पुनः विस्फोट होगा तथा यह क्रम चलता रहेगा! इस सिद्धांत को दोलायमान ब्रह्मांड सिद्धांत कहते हैं।

यह नहीं ज्ञात था कि ब्रह्मांड फ़ैल रहा है। दरअसल डॉप्लर प्रभाव के कारण दूर के तारों से प्राप्त होनेवाला प्रकाश और भी अधिक कम हो जाता है तथा इसका योगदान ओल्बर्स द्वारा गणना किये गए अंश से काफी कम हो जाता है। इसलिए इस प्रश्न 'रात अंधेरी क्यों?' का उत्तर है : ब्रह्मांड फ़ैल रहा है। आइए, अब ब्रह्मांड की उत्पत्ति से संबंधित आधुनिक सिद्धांतों पर चर्चा करते हैं।

ब्रह्मांड की उत्पत्ति का बिग बैंग सिद्धांत

जैसाकि हम जानते हैं कि हब्बल ने यह खोज की थी कि ब्रह्मांड का विस्तार (फैलाव) हो रहा है। उस समय अन्य वैज्ञानिकों के साथ-साथ हब्बल को भी अपनी इस असाधारण खोज के मायने स्पष्ट नहीं थे। इस मुद्दे पर विचार स्वरूप जोर्ज लेमाइत्रे और जोर्ज गैमो ने गंभीर प्रयास किए। इन दोनों वैज्ञानिकों के अनुसार यदि आकाशगंगाएं बहुत तेज़ी से हमसे दूर भाग रहीं हैं तो इसका अर्थ यह हुआ कि अतीत में किसी समय जरुर ये आकाशगंगाएं एक साथ रहीं होंगी।

वस्तुतः ऐसा लगा कि 10 से 15 अरब वर्ष पहले ब्रह्मांड का समस्त द्रव्य एक ही जगह पर एकत्रित रहा होगा। उस समय ब्रह्मांड का धनत्व असीमित था तथा सम्पूर्ण ब्रह्मांड एक अति-सूक्ष्म बिंदू में समाहित था। इस स्थिति को परिभाषित करने में विज्ञान एवं गणित के समस्त नियम-सिद्धांत निष्फल सिद्ध हो जाते हैं। वैज्ञानिकों ने इस स्थिति को गुरुत्वीय विलक्षणता नाम दिया है। किसी अज्ञात कारण से इसी सूक्ष्म बिन्दू से एक तीव्र विस्फोट हुआ तथा समस्त द्रव्य इधर-उधर छिटक गया। इस स्थिति में किसी अज्ञात कारण से अचानक ब्रह्मांड का विस्तार शुरू हुआ और दिक्-काल की भी उत्पत्ति हुई। इस घटना को ब्रह्मांडीय विस्फोट का नाम दिया गया। अंग्रेज ब्रह्मांड विज्ञानी सर फ्रेड हॉयल ने इस सिद्धांत की आलोचना करते समय मजाक में ये शब्द गढ़े- 'बिग बैंग'।

बिग बैंग सिद्धांत ब्रह्मांड की उत्पत्ति का सबसे अधिक मान्य सिद्धांत है। परंतु जिस सैद्धांतिक स्थित पर भौतिकी या गणित प्रकाश डालने में असमर्थ है, उसको मानने के हमारे पास क्या सबूत है? दरअसल भौतिकी को अपने सिद्धांतों पर उस समय संदेह हो जाता है, जब वह उसे अनंत की तरफ ले जाते हैं। बहरहाल, बात सबूत की। वैज्ञानिक जोर्ज गैमो ने 1940 के दशक में यह अनुमान लगाया कि बिग बैंग ने उत्पत्ति के कुछ समय में ब्रह्मांड को उच्च तापमान विकिरण से भर दिया होगा! उन्होंने यह भी अंदाज़ लगाया था कि ब्रह्मांड के विस्तार ने उच्च तापमान विकिरण को धीरे-धीरे ठंडा कर दिया होगा और उसके अवशेष माइक्रोवेव के रूप में देखे जा सकते हैं। वर्ष 1965 में आर्नो पेंजियाज और रोबर्ट विल्सन ने अनजाने में ही माइक्रोवेव विकिरण की खोज की। इस बड़े सबूत के कारण ब्रह्मांड की उत्पत्ति के बिग बैंग सिद्धांत को सर्वाधिक मान्यता प्राप्त है।

स्थायी अवस्था सिद्धांत

बीसवीं सदी के प्रतिभाशाली ब्रह्मांडविज्ञानी फ्रेड हॉयल ने अंग्रेज गणितज्ञ हरमान बांडी और अमेरिकी वैज्ञानिक थोमस गोल्ड के साथ संयुक्त रूप से ब्रह्मांड की उत्पत्ति का सिद्धांत प्रस्तुत किया। यह सिद्धांत 'स्थायी अवस्था सिद्धांत'के नाम से विख्यात है। इस सिद्धांत के अनुसार, न तो ब्रह्मांड का कोई आदि है और न ही कोई अंत। यह समयानुसार अपरिवर्तित रहता है। यद्यपि इस सिद्धांत में प्रसरणशीलता समाहित है, परन्तु फिर भी ब्रह्मांड के धनत्व को स्थिर रखने के लिए इसमें पदार्थ स्वतः रूप से सृजित होता रहता है। जहाँ ब्रह्मांड की उत्पत्ति के सर्वाधिक मान्य सिद्धांत (बिग बैंग सिद्धांत) के अनुसार पदार्थों का सृजन अकस्मात हुआ, वहीं स्थायी अवस्था सिद्धांत में पदार्थों का सृजन हमेशा चालू रहता है।

हॉयल ने बिग बैंग सिद्धांत के अवधारणाओं के साथ असहमति क्यों प्रकट की? दरअसल हॉयल जैसे दार्शनिक प्रवृत्ति वाले व्यक्ति के लिए ब्रह्मांड के आदि या आरम्भ जैसे विचार को मानना अत्यंत कष्टदायक था। ब्रह्मांड के आरम्भ (सृजन) के लिए कोई कारण और सृजनकर्ता (कर्ता) होना चाहिये। वर्तमान में इस सिद्धांत के समर्थक न के बराबर हैं।

दोलायमान ब्रह्मांड सिद्धांत

ब्रह्मांड की उत्पत्ति का यह एक नया सिद्धांत है। इस सिद्धांत के अनुसार हमारा ब्रह्मांड करोड़ों वर्षों के अंतराल में विस्तृत और संकुचित होता रहता है। डॉ. एलन संडेज इस सिद्धांत के प्रवर्तक हैं। उनका मानना है कि आज से 120 करोड़ वर्ष पहले एक तीव्र विस्फोट हुआ था और तभी से ब्रह्मांड फैलता जा रहा है। 290 करोड़ वर्ष बाद गुरुत्वाकर्षण बल के कारण इसका विस्तार रुक जाएगा। इसके बाद ब्रह्मांड संकुचित होने लगेगा और अत्यंत संपीडित और अनंत रूप से बिंदुमय आकार धारण कर लेगा, उसके बाद एक बार पुनः विस्फोट होगा तथा यह क्रम चलता रहेगा! इस सिद्धांत को दोलायमान ब्रह्मांड सिद्धांत कहते हैं।

अब सवाल यह उठता है कि क्या हमने लेख के शुरू में उठाए गये सभी मूलभूत प्रश्नों के उत्तर पा लिए हैं? नहीं! हम किसी भी प्रश्न का संतोषजनक उत्तर नहीं ढूंढ़ पाये हैं। इससे यह साबित होता है कि ब्रह्मांड की उत्पत्ति के बारे मे कोई भी सिद्धांत संपूर्ण नहीं है। वास्तव में हम ब्रह्मांड के बारे में केवल 4% ही जानते हैं, बाकी 96% के बारे में हमे न के बराबर जानकारी है। इसलिए इस जानकारी के आभाव में ब्रह्मांड की उत्त्पत्ति के बारे में कोई भी मान्यता अभी अधूरी है। अतः ब्रह्मांड की उत्पत्ति के इन नवीन सिद्धांतों में सुधार की अभी काफी गुंजाइश है!

pk110043@gmail.com

आईओटी : धारदार होगी डिजिटल जमाने की जिंदगी

शंभु सुमन

शंभु सुमन दिल्ली में रहने वाले मूलतः बाढ़, पटना (बिहार) निवासी वरिष्ठ पत्रकार और लेखक हैं। विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी के विविध विषयों पर लगातार पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहे हैं। चार पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। हिंदी पाठकों के लिए सरल-सहज भाषा में टेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में हो रहे सतत विकास की जानकारी पहुँचाना लक्ष्य है। आप पत्रिका 'न्याय चक्र' से जुड़े हैं और आलेख, किताबें एवं पत्रिकाओं के वेब पोर्टल मैगबुक के समूह संपादक भी हैं।

डिजिटल जमाने की हाई-फाई लाइफस्टाइल में जिंदगी को इंटरनेट की बदौलत जबरदस्त प्रवाह मिल गया है। अब इसके साथ इंटरनेट आफ थिंग्स यानी आईओटी भी जुड़ गया है, जिसमें जीवनशैली को बदलने और बेहतरीन बनाने की अनंत क्षमता है। स्मार्ट घर, स्मार्ट टाऊन, स्मार्ट गार्डन, स्मार्ट किचन, सुदूर हेल्थ सुविधाएं, स्मार्ट डिजिटल पहनावे, सेंसर युक्त हर काम के उपकरण, एक उंगली या आवाज से मशीनों का संचालन आदि से लेकर खेती-किसानी, सर्विलांस और सभी किस्म के परिवहन संचालन तक बहुपयोगी बनाए जा सकते हैं। इंटरनेट के 5जी नेटवर्क आ जाने के बाद मशीन से मशीन का संचालन और भी सहज-सरल हो जाएगा। इस बदौलत न केवल कंपनियों के कारोबार में और अधिक मुनाफा हासिल करना संभव होगा, बल्कि कार्बन उत्सर्जन में कमी कर जलवायु परिवर्तन से लड़ने में मदद भी मिलेगी।

इंटरनेट आफ थिंग्स (आईओटी) आधुनिक टेक्नॉलॉजी का एक ऐसा कांसेप्ट है, जो बताता है कि दुनिया की हर चीज को दैनिक इस्तेमाल में कैसे लाया जा सकता है। साथ ही इससे यह जानकारी भी मिलती है कि विभिन्न इलेक्ट्रानिक डिवाइसों को कम्प्यूटिंग, इंटरनेट और कम्युनिकेशन के नेटवर्किंग के साथ जोड़कर उसे किस हद तक उपयोगी बनाया जा सकता है या फिर उनके इस्तेमाल से इंसान की जीवन शैली और कितना सुविधाजनक बन सकती है? यह कहें कि आईओटी में एक तरह से हमारे आटोमेशन मोड को सहज और सरल बनाने की अद्भुत क्षमता है। यही कारण है कि इसे अब बाजार एवं औद्योगिक जगत में नए दौर का तेल कहा जाने लगा है।

इस साल 20 से 24 जनवरी तक स्विटजरलैंड के दावोस में आयोजित 50वें वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम (विश्व आर्थिक मंच) की सालाना बैठकों के दौरान टेक्नॉलॉजी ही मुख्य मुद्दा बना। इसमें भारत ने भी सशक्त भागीदारी निभाई और तकनीक को सामान्य लोगों के लिए हितैषी बनाने पर हुई चर्चाओं के दौरान अपना मजबूत पक्ष रखा। इसी क्रम में आईओटी के बिजनेस वैल्यू को अहमियत मिली। सर्वसहमती से स्वीकारा गया कि आईओटी में एक विनिंग बिजनेस बनने की जबरदस्त हैसियत है, जिसके साथ 5जी कनेक्शन और डेटा शेयर की नई क्षमता है। सेंसर, सॉफ्टवेयर और दूसरे फिजिकल उपकरणों में दूसरी प्राद्योगिकियों के साथ डेटा को इंटरनेट के जरिए कनेक्ट और एक्सचेंज किया जा सकता है और तो और, इनसे कार्बन उत्सर्जन को कम कर जलवायु परिवर्तन से लड़ने में भी मदद मिल सकती है।

मशीनों का स्वतः संचालन

किसी भी मशीन को ऑन या ऑफ कर चलाना हर कोई जानता है। मशीनों का संचालन पूरी तरह से इंसानी हाथों में रहता है। इससे अलग अब यह कोई कल्पना नहीं है कि मुश्किल से मुश्किल काम को मशीनें ही खुद करने लगी हैं। एक मशीन ही दूसरे मशीन को अच्छी तरह से संचालित कर

सकती हैं। यह कहें कि मशीनें या उपकरणों को कई मोड पर संचालित करने से पूरी तरह से मुक्ति मिलने वाली। उसे केवल द्वारा शुरूआती दिशा-निर्देश की जरूरत होती है। यही नहीं उनका संचालन सैंकड़ों-हजारों किलोमीटर दूर बैठा व्यक्ति कर सकता है। वह भी केवल एक उंगली के स्पर्श और आवाज की बदौलत।

एक टेनिस खिलाड़ी को इंटरनेट से जुड़े टेनिस रैकेट के बारे में जरूर मालूम होगा, जिसके भीतर सेंसर लगा होता है। उसकी मदद से गेंद को इस कदर नियंत्रित किया जा सकता है कि वह कोर्ट से बाहर न जाने पाए।

इसी तरह से ई-कामर्स की साइटों पर ड्रेस सर्फिंग करते हुए ब्लूटूथ लगे जैकेट की भी जानकारी मिली होगी, जो सीधे स्मार्टफोन से जुड़ता है। यह गूगल और लेवी कंपनियों के बीच सहभागिता से संभव हुआ है। जैकेट के कफ के जरिए महसूस की जाने वाली भिनभिनाने की आवाज से आपको कहीं और रखा हुआ स्मार्टफोन ध्यान में आ जाएगा। जैकेट के आस्तीन को स्वाइप कर मनपसंद म्यूजिक सुन सकते हैं, तो कंधे की पट्टियों से मनचाही तस्वीरें ली जा सकती है। यह सब आइओटी से संभव है, जिसका आगाज हो चुका है। जरूरत सिर्फ इसे लोगों तक पहुँचाने और कामकाज की जरूरतों के मुताबिक उपयोगी बनाने की है।

कुछ अन्य उदाहरण

- एक-घर में एक बुजुर्ग व्यक्ति अकेला है। अचानक वह असहज महसूस करने लगता है। तभी उसका स्मार्टफोन सूचित करता है कि उसके ब्लड प्रेशर की दवाई लेने का समय हो चुका है। यही नहीं उसकी तबीयत अचानक अधिक खराब होने की स्थिति में स्मार्टफोन इसकी हेल्थ संबंधी लेटेस्ट सूचना जरूरत के मुताबिक न केवल इमरजेंसी मेडिकल टीम को दे सकता है, बल्कि डॉक्टर को भी बुलाने में सक्षम है।
- यदि कोई व्यक्ति चाहता है कि उसके घर पहुंचने से पहले चाय या कॉफी तैयार मिले। घर का एसी भी ऑन हो जाए और घर पूरी तरह से ठंडा मिले। यह सब आईओटी से संभव है।
- यदि एक कामकाजी महिला चाहती है कि उसके घर के स्मार्ट फ्रीज में रखी सब्जियों और फलों के बारे में समय रहते जानकारी मिल जाए कि उनके सही इस्तेमाल करने का कितना समय बचा है। तो यह इंटरनेट नेटवर्क से जुड़े आइओटी के वियरेबल डिवाइसों से संभव है।
- अक्सर टंकियों में पंप से भरा जाने वाला पानी ओवरफ्लो हो जाता है। नीति आयोग के अनुसार शुद्ध पेयजल को बर्बादी से बचाने का काम स्मार्ट मीटर के जरिए संभव है।

इन उदाहरणों से आईओटी की जरूरतें और उपयोगिता पर जरा भी संदेह नहीं किया जा सकता। दो साल पहले आईओटी इंडिया कांग्रेस के अनुसार दूरसंचार, स्वास्थ्य, विविध वाहनों, घरों, शहरों और कम्प्यूटर जैसे क्षेत्रों में इसका बाजार 2020 में 9 अरब डॉलर हो जाने की उम्मीद है। इसे यहां यूटिलिटीज, विनिर्माण, मोटर वाहन, परिवहन और लॉजिस्टिक जैसे उद्योगों में व्यापक स्तर पर अपनाया जाना है। साथ ही स्वास्थ्य देखभाल, खुदरा और कृषि जैसे क्षेत्रों में भी आईओटी को विस्तार मिलने की उम्मीद है। आने वाले सालों में 100 स्मार्ट शहरों के विकास के लिये एक बिलियन डॉलर सरकारी निवेश होने से विभिन्न उद्योग आईओटी अपनाने के लिए प्रोत्साहित हैं।

यही वजह है कि आईबीएम, सिस्को, क्वालकॉम जैसी बड़ी और भारतीय स्टार्ट-अप कंपनियों ने इस क्षेत्र में निवेश शुरू कर दिया है। जैसे जर्मन तकनीकी प्रमुख बॉश ने भारत में अगले तीन सालों में 1,700 करोड़ रुपये निवेश करने की योजना बनाई है, जो आईओटी और आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस (एआई) के साथ केंद्रीत है। भारतीय दूरसंचार उद्योग भी आईओटी में भारी निवेश कर रहा है। इसका फायदा इन दोनों पर आधारित एप्लिकेशन से बम्पर रोजगार सृजन का मिलेगा। ब्राडबैंड इंडिया फोरम (बीआइएफ) द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार सैटेलाइट मैपिंग, इलेक्ट्रॉनिक मार्केट प्लेस, पशुधन ट्रैसेबिलिटी, क्लाइमेट सेंसिंग स्टेशन, कृषि ड्रोन आदि की रूपरेखा बनाई जा चुकी है। इनमें कृषि क्षेत्र को बदलने की क्षमता है। इनसे स्मार्ट फार्म बनाने में मदद मिलेगी और कृषि उत्पादन में पूर्वानुमान लगाए जाने से किसानों की आय बढ़ेगी। आठ-दस सालों के दरम्यान ग्रामीण भारत में 28,000 से अधिक नौकरियां सृजित होंगी।

आइओटी का इतिहास और एप्लीकेशंस

इंटरनेट आफ थिंग्स सबसे पहले कार्नेज मेलॉन यूनिवार्सिटी में कोक वेंडिंग मशीन को इंटरनेट से जोड़ने के साथ लोगों के सामने आया। यह अपने आप में सबसे पहला इंटरनेट-कनेक्टेड डिवाइस था। इसके आविष्कारक केविन एश्टन हैं। इंटरनेट के जुड़कर काम करने वाले उपकरण की शुरूआत भले ही 19 साल पहले हुई हो, लेकिन इसकी अवधारणा 70 के दशक के आसपास ही बन गई थी। तब इस विचार को 'एम्बेडेड इंटरनेट' या 'कम्प्रेहेंसिव कम्प्यूटिंग' कहा गया था, लेकिन वास्तविक शब्द इंटरनेट

आफ थिंग्स को केविन ने 1999 में प्रॉक्टर एंड गैंबल में अपने काम के दौरान गढ़ा था। उन दिनों केविन कंपनी सप्लाई चेन आप्टेमाइजेशन में काम कर रहे थे और अपने सीनियर मेनेजमेंट का ध्यान नई रोमांचक तकनीक आरएफआईडी(रेडियो फ्रिक्वेंसी आर्डेंटिफिकेशन) की ओर आकर्षित करना चाहते थे। उन्हीं दिनों इंटरनेट नया-नया चलन में आया था और केविन ने इसे 'इंटरनेट ऑफ थिंग्स' की संज्ञा दी।

विभिन्न क्षेत्रों में काम आने वाले आईओटी के कई एप्लिकेशंस हैं, जो संचार की 5जी नेटवर्क सेवाओं से संचलित होगा। उल्लेखनीय है कि इससे मोबाइल ब्रॉडबैंड में तेजी से बदलाव आएगा, क्योंकि पीक डाउनलोड की गति 20 गीगाबिट प्रति सेकंड जितनी अधिक हो जाएगी। इससे मशीनों के स्वचालन की कार्यक्षमता और दक्षता बढ़ेगी। आईओटी डिवाइस सामान्य मानक वाले उपकरणों, जैसे कम्प्यूटर, लैपटॉप, स्मार्टफोन आदि के अतिरिक्त इंटरनेट कनेक्शन के विस्तार के साथ सपोर्ट करते हैं। ये डिवाइस विशुद्ध रूप से हाई डेफिनिशन तकनीक के साथ एकीकृत होकर इंटरनेट पर आसानी से बातचीत करना या जुड़ना संभव बनाते हैं। जरूरत पड़ने पर इन्हें दूर से नियंत्रित और प्रबंधित भी किया जा सकता है। इन दिनों इस तरह के अनगिनत उत्पाद तैयार किए जा रहे हैं। दुनिया में करीब 7.25 बिलियन इंसानों के लिए साल 2021 तक 20 बिलियन आइओटी स्मार्ट डिवाइस तैयार किए जा सकते हैं, जो 5जी नेटवर्क की मांग में वृद्धि को पूरा करेंगे। आईओटी उत्पादों और डिवाइसों में मूल रूप से लैपटॉप, स्मार्टफोन, स्मार्ट गजेट, स्मार्ट वाच और डिजिटलाइज्ड वाहन हो सकते हैं।

यूं काम करता है आईओटी डिवाइस

यह सवाल भी जिज्ञासा से भरा है कि आईओटी के स्मार्ट डिवाइस कैसे काम करते हैं ? मूल रूप से एक सामान्य डिवाइस को आईओटी स्मार्ट डिवाइस में बदलना दो चीजों पर निर्भर करता है। पहला, एक ऐसा डिवाइस जिसमें किसी भी तरह से इंटरनेट से जुड़ने की इलेक्ट्रॉनिक क्षमता हो। उसमें सेंसर और फंक्शनल सॉफ्टवेयर की इनबिल्ट टेक्नॉलॉजी हो। दूसरा, वे नेटवर्क कनेक्शन और गति देने वाले एक्च्यूएटर्स को सपोर्ट करते हों। इस तरह से दोनों प्रक्रियाओं को एक साथ जोड़कर ही

आईओटी डिवाइस बनता इन डिवाइसों में निम्न ऊर्जा वायरलेस, ब्लूटूथ, एनएफसी, एलटीई, जिगबी, वायरलेस प्रोटोकॉल आदि तकनीकों का उपयोग किया जाता है। पहले साधारण घड़ियों का उपयोग केवल समय और तारीख देखने के लिए किया जाता था, लेकिन अब स्मार्ट आईओटी घड़ियों से उपयोगकर्ता अपने चलने के स्टेप्स के आधार पर अपने दिल के धड़कन की दर और कैलोरी की गिनती भी कर सकता है। बाजार में कई आईओटी डिवाइस उपलब्ध हैं। इनके कुछ उदाहरणों में स्मार्ट मोबाइल्स, स्मार्ट रेफ्रिजरेटर, स्मार्ट वॉच, स्मार्ट फायर अलार्म, स्मार्ट डोर लॉक, स्मार्ट साइकिल, मेडिकल सेंसर, फिटनेस ट्रैकर, स्मार्ट सिक्योरिटी सिस्टम है। ये प्रकार उपयोगी हो सकते हैं:-

स्मार्ट होमः स्मार्ट होम आइओटी की सबसे लोकप्रिय एप्लीकेशन है। अमेजन इको से लेकर नेस्ट थर्मोस्टेट तक ऐसे हजारों प्रोडक्ट्स हैं, जिन्हें यूजर्स अपनी आवाज से कंट्रोल कर सकते हैं।

वियरेबल्स वाचः अब समय बताने तक ही सीमित नहीं रही है। एप्पल वाच समेत बाजार में ऐसे कई वाच उपलब्ध हैं, जिनसे अब टेक्स्ट मैसेज, फोन कॉल्स और कई काम किये जा सकते हैं। इसी के साथ फिटबिट जैसे डिवाइस ने फिटनेस की दुनिया को बदल दिया है।

फिटबिट वनः यह ट्रैक करता है की आप कितना चले हैं? अपने कितनी कैलरीज बर्न की हैं या आप कितना सोए हैं आदि। इसी के साथ यह डिवाइस आपके स्मार्टफोन या कम्प्यूटर से जुड़कर आपके फिटनेस डाटा को चार्ट में भी तब्दील कर देता है, ताकि आप अपनी फिटनेस प्रोग्रेस आसानी से ट्रैक कर सकें।

स्मार्ट सिटीजः आईओटी लोगों की रोजमर्रा में आने वाले परेशानियों को बहुत आसानी से हल कर सकता है। इसके डिवाइसेज क्राइम, प्ल्यूशन, ट्रैफिक आदि की समस्या को आसानी से निपटा जा सकता है। स्पैनिश सिटी बार्सिलोना स्मार्ट सिटीज में से सबसे पहला नाम है। यहां कई आइओटी की योजनाओं को लागू किया गया है। इससे स्मार्ट पार्किंग और वातावरण तक को साफ रखने में मदद मिली है। भारत के स्मार्ट सिटी के लिए भी आईओटी ऊर्जा आधारित स्मार्ट पानी और ऊर्जा मीटर लागाए जाने हैं। एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2020 के अंत तक 1.9 बिलियन डिवाइस कनेक्ट किये जाने की उम्मीद है।

स्मार्ट मीटरः भारत में जल संकट की घटनाओं को दखते हुए उसका सामना करने के क्रम में नीति आयोग ने स्मार्ट मीटर का विचार किया है। आईओटी का यह डिवाइस निर्धारित समय में व्यक्तिगत जल खपत की रीडिंग करने और लीक का पता लगाने के साथ-साथ आपूर्ति को दूर से ही बंद कर सकता है। इसका इस्तेमाल खेती में फसलों के लिए पानी, नल के पानी की गुणवत्ता, नदी में फेंके जाने वाले अवशिष्ट की मात्रा या रिसाव का पता लगाने के अतिरिक्त जलाशयों में जल स्तर की विविधता आदि की निगरानी के लिए भी किया जा सकता है। एक शोध संस्थान आईएचएस के अनुसार आगामी पाँच सालों में 500 मिलियन स्मार्ट वाटर मीटर इकाइयों को विश्व स्तर पर बेचा जाएगा।

कनेक्टेड कारः इन वाहनों में इंटरनेट एक्सेस होता है और यह एक्सेस दूसरों के साथ शेयर भी किया जा सकता है। चालक रहित कार इसी कांसेप्ट पर आधारित है।

अमेजन इकोः इसमें यूजर्स अलग-अलग कार्य करवाने के लिए बात कर सकते हैं। इससे म्यूजिक प्ले करने, मौसम की जनकारी देने, खेल का स्कोर बताने, टैक्सी बुक करने जैसे कई काम लिए जा सकते हैं।

एस्अ्रम लॉकः आईओटी का यह सिक्योरिटी सिस्टम ब्लूटूथ आधारित लॉक है, जिसमें चाबी या किसी कॉम्बो लॉक की जरुरत नहीं पड़ती। ये लॉक एंड्रॉयड और आईओटी डिवाइसेज को सपोर्ट करता है। इसे घर में मौजूद अन्य गैजेट्स के साथ आसानी से कनेक्ट किया जा सकता है।

shambhusuman11@gmail.com

एम-लर्निंग

शिक्षा का अ-संस्थानीकरण

कुणाल सिंह

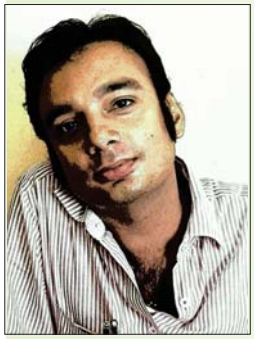

कुणाल सिंह यूँ तो हिन्दी साहित्य का एक लब्ध प्रतिष्ठित नाम है किन्तु इधर उन्होंने विज्ञान लेखन में जो हस्तक्षेप किया है वह काबिले-गौर है। कुणाल सिंह हिन्दी के जाने-माने कथाकार हैं। कहानियों की दो किताबें और एक उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। आप ज्ञानपीठ नवलेखन पुरस्कार व साहित्य अकादेमी युवा पुरस्कार से सम्मानित हैं।

कुणाल के कुछ विज्ञान लेख प्रकाशित हुए हैं जिनमें उन्होंने विज्ञान के मूलभूत और तकनीक दोनों क्षेत्रों में सार्थक हस्तक्षेप किया है। वर्तमान में आप भोपाल में निवासरत हैं।

तकनीक के बदलते चेहरे ने अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ शिक्षा के क्षेत्र पर भी गहरा असर डाला है। कहा जा सकता है कि तकनीक ने शिक्षा की दुनिया के भीतरी और बाहरी मानचित्र में आमूल बदलाव किया है। हम सभी इस तथ्य से अवगत हैं कि शिक्षा-जगत में ई-लर्निंग ने क्रान्तिकारी भूमिका निभाई है, खासकर दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में इसके अवदान भुलाये नहीं जा सकते हैं। अब विविध शैक्षिक उपक्रमों में मोबाइल जैसे संयन्त्रों के सकारात्मक प्रवेश ने शिक्षा के स्वरूप को और अधिक बदल दिया है। ई-लर्निंग की तर्ज पर इसे एम-लर्निंग कहा जाने लगा है।

हमारे पास परम्परा से प्राप्त शिक्षा का जो मॉडल था, उसमें एक 'गुरुजी' हुआ करते थे जो 'विद्या' का उपार्जन करने आये विद्यार्थियों के बीच 'विद्या-दान' के पवित्र कर्म का निष्पादन किया करते थे और इसके एवज में उन्हें 'गुरुदक्षिणा' से नवाजा जाता था। गुरु का अपना एक कुल हुआ करता था, गुरुकुल। परम्परा का यह कुल मूलतः आज की यूनिवर्सिटी है। इस गुरुकुल के अपने विधान और अपनी रीति होती थी, मसलन द्रोणाचार्य के गुरुकुल सिर्फ क्षत्रियों के लिए खुले थे तो परशुराम के यहाँ क्षत्रियों का प्रवेश सर्वथा निषिद्ध था। इस प्रकार प्राचीनकालीन इस कुलीन यूनिवर्सिटी को सबसे पहले चैलेंज किया एकलव्य ने। यह सर्वविदित है कि एकलव्य को जब द्रोणाचार्य ने अपने गुरुकुल में दाखिला लेने से मना कर दिया तो उसने उनकी मूर्ति स्थापित की और स्वाध्याय से विद्या का उपार्जन करना शुरू कर दिया। इस प्रकार उसने अनजाने ही डिस्टेंट एजुकेशन का प्रारम्भ किया, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार बिना किसी विश्वविद्यालय में दाखिला लिये कोई मोबाइल या इंटरनेट के जरिये पढ़ाई शुरू कर दे। उस जमाने में उसकी इस क्रान्तिकारी खोज का उसे खामियाजा भी भुगतना पड़ा और उसका अँगूठा काटकर द्रोण ने उसे जिन्दगी-भर के लिए 'अँगूठाछाप' बना देने की साजिश की। लेकिन वक्त बदलता है और यह जानना मजेदार है कि एकलव्य ने बिना अँगूठे के, सिर्फ तर्जनी और मध्यमा के सहारे तीर चलाने का जो हुनर प्राप्त किया, आज पूरे विश्व में तीरंदाजी का एक वही तरीका मान्य है। किसी वैश्विक तीरंदाजी प्रतियोगिता में यदि आज आप अर्जुन की तरह अँगूठे की मदद से तीर चलाना चाहेंगे तो आपको नियम का उल्लंघन करने के कारण प्रतियोगिता से ही बाहर होना पड़ेगा। वहाँ आपको बाध्य होकर तीरंदाजी के एकलव्य-पन्थ को ही अपनाना पड़ेगा। बहरहाल।

'गुरु' शब्द का 'शिक्षक' में रूपान्तरण ने सबसे पहले इस शिक्षण के इस पारम्परिक ढाँचे को ध्वस्त किया। 'गुरु' शब्द विशेषणात्मक था, जो अपने अर्थ में श्रेष्ठताबोध को ध्वनित करता है। 'शिक्षक' सीधे-सीधे कर्म का द्योतक बनकर आया, वह व्यक्ति जो शिक्षा दे। यहाँ यह एक प्योर प्रोफेशन में तब्दील हो गया, मिशनरी सेवाभाव उससे तिरोहित हो गया। अब विद्यार्थियों को

गुरुदक्षिणा नहीं, फीस का भुगतान करना था। गुरुदक्षिणा में गुरुजी मनचाही मुराद माँग सकते थे, विद्यार्थी को वह देनी ही पड़ती थी। गुरुजी चाहें तो मुट्ठी-भर अनाज माँग लें, राज-पाट माँग लें, जिन्दगी-भर की गुलामी माँग लें या फिर द्रोण की तरह अँगूठा माँग लें। इसकी निस्बत फीस ज्यादा स्पष्ट, तयशुदा और भौतिक हुआ। इस प्रकार 'विद्या' और 'शिक्षा' में फक्र किया गया। विद्या को उपार्जित किया जाता है, जबकि शिक्षा प्राप्त की जाने लगी।

'गुरुकुल' के इस कायान्तरण के बावजूद हिन्दी में शिक्षालयों के लिए अब भी 'विद्यालय' और शिक्षार्थी के लिए 'विद्यार्थी' जैसे पारम्परिक शब्द ही प्रचलन में रहे आये। अब भी शिक्षण का ढाँचा कुछ इस प्रकार बना रहा कि नियत समय पर कक्षाएँ लगतीं, ब्लैकबोर्ड के आगे शिक्षक खड़े होते और अपने नोट्स से विद्यार्थियों को पढ़ाते, क्लासवर्क अथवा होमवर्क देते और उसे पूरा न करने पर डाँटने-फटकारने के अधिकारी होते। अर्थात् शिक्षक होने का अहम् अब भी यथावत् रहा, मानने का प्रचलन बना रहा कि शिक्षक ज्ञान 'देने' वाला, विद्यार्थी ज्ञान 'लेने' वाला है। 'दाता' और 'याचक' के बीच किसी प्रकार के संवाद की स्थिति नहीं होती, इसलिए कक्षाओं में संवाद अब भी न अनुपस्थित था। परिवर्तन के नाम पर बस इतना ही हुआ कि पहले के उपदेश (प्रीच) का स्थान अब व्याख्यान (लेक्चर) ने ले लिया।

तकनीकी विकास ने सबसे पहले इस ब्लैकबोर्ड-आधारित शिक्षण-प्रणाली को अपदस्थ किया। ब्लैकबोर्ड का स्थान प्रोजेक्टर्स, लैपटॉप और स्मार्ट-बोर्ड ने ले लिया। तकनीक ने कम्प्यूटर-आधारित शिक्षण-व्यवस्था की सूत्रपात की। किन्तु क्लासरूम स्ट्रक्चर पूरी तरह से मोबाइल-संयन्त्रों के शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश से ही ध्वस्त हो सका और शिक्षण का पूर्णरूपेण अ-संस्थानीकरण सम्भव हुआ। पीडीए, स्मार्ट फोन और नोटबुक जैसे मोबाइल-संयन्त्रों ने शिक्षा को क्लासरूम की चाहारदीवारी और पीरियड की हदबन्दी से एकबारगी आजाद कर दिया। इस प्रकार 'शिक्षा कभी भी...कहीं भी' जैसी अवधारणा का जन्म हुआ। इसे ही सूत्र-रूप में 'एम-लर्निंग' (मोबाइल लर्निंग) कहा जाता है। 'एम-लर्निंग' पदबन्ध वस्तुतः 'ई-लर्निंग' (शिक्षण की ऐसी प्रविधि जिसमें कम्प्यूटर और विविध तकनीकों का सहारा लिया जाता है) के ही अनुकरण में गठित हुआ। वैसे देखा जाए तो 'ई-लर्निंग' का भी प्रचलन 'डी-लर्निंग' (डिस्टेंट लर्निंग/ दूरस्थ शिक्षण) की तर्ज पर हुआ है। इस प्रकार डी-लर्निंग से होते हुए ई-लर्निंग में रूपान्तरित शिक्षा का भविष्य अब एम-लर्निंग के रूप में देखा जा रहा है।

एम-लर्निंग को शिक्षण का एक ऐसा मॉडल कहा जा सकता है जो विद्यार्थी तक शिक्षण सामग्री की आपूर्ति कभी भी और कहीं भी कर सकने में सक्षम है। इसके लिए विद्यार्थी को किसी शिक्षण संस्थान का अनुग्रही या मुखापेक्षी होने की अनिवार्यता नहीं है। इस प्रविधि का उपयोग करते हुए विद्यार्थी अपनी शिक्षण-सामग्री को अपनी सुविधा के अनुसार डाउनलोड कर सकते हैं अथवा शिक्षक से ई-मेल द्वारा संवाद स्थापित कर सकते हैं। कहें कि एम-लर्निंग पद्धति ने शिक्षण के क्षेत्र में किसी भी प्रकार की भौगोलिक सीमा का अतिक्रमण किया और इस प्रकार शिक्षण की पहुँच में वृद्धि हुई।

मोबाइल फोन, नोटबुक, टैबलेट्स, एमपीथ्री प्लेयर्स, आईपॉड्स आदि उपकरणों द्वारा एम-लर्निंग प्रविधि सम्भव है। इन संयन्त्रों की संरचना और इनके चरित्र एम-लर्निंग की अवधारणा और विशिष्टता को स्पष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए हम कह सकते हैं कि एम-लर्निंग की सर्वप्रमुख विशेषता उसकी पोर्टेबिलिटी है। यह किसी स्थान-विशेष से आबद्ध नहीं, जैसा कि ऊपर भी कहा गया, एम-लर्निंग संस्थागत भूगोल की हदबन्दी को तोड़ता है। इसके द्वारा कहीं भी और कभी भी शिक्षा की सुलभता सुनिश्चित हुई। दूसरे, चूँकि ये सारे संयन्त्र, चाहे मोबाइल हो या टैबलेट, किसी एक व्यक्ति से सम्बद्ध होते हैं, इसलिए एम-लर्निंग का स्वरूप सामूहिक शिक्षा का न होकर व्यक्तिगत शिक्षा का है। शिक्षा जहाँ समूह में होती है, वहाँ शिक्षक को समूह का हित देखना होता है। यदि कोई विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने में दूसरे विद्यार्थियों की निस्बत धीमा है, तो चाहकर भी शिक्षक उसकी विशेष मदद नहीं कर सकता। ट्यूशन जैसी अवधारणा के जन्म के पीछे मूल रूप से यही समस्या रही है। तीसरा, चूँकि इन संयन्त्रों का प्रयोग कोई भी कर सकता है, इनकी सेवाएँ हर किसी के लिए

मोबाइल फोन, नोटबुक, टैबलेट्स, एमपीथ्री प्लेयर्स, आईपॉड्स आदि उपकरणों द्वारा एम-लर्निंग प्रविधि सम्भव है। इन संयन्त्रों की संरचना और इनके चरित्र एम-लर्निंग की अवधारणा और विशिष्टता को स्पष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए हम कह सकते हैं कि एम-लर्निंग की सर्वप्रमुख विशेषता उसकी पोर्टेबिलिटी है। यह किसी स्थान-विशेष से आबद्ध नहीं, जैसा कि ऊपर भी कहा गया, एम-लर्निंग संस्थागत भूगोल की हदबन्दी को तोड़ता है। इसके द्वारा कहीं भी और कभी भी शिक्षा की सुलभता सुनिश्चित हुई। दूसरे, चूँकि ये सारे संयन्त्र, चाहे मोबाइल हो या टैबलेट, किसी एक व्यक्ति से सम्बद्ध होते हैं, इसलिए एम-लर्निंग का स्वरूप सामूहिक शिक्षा का न होकर व्यक्तिगत शिक्षा का है।

सुलभ हैं, इसलिए एम-लर्निंग का लाभ भी हर कोई ले सकता है। अर्थात् एम-लर्निंग ने शिक्षा के संस्थानीकृत चरित्र को पूरी तरह बदल दिया है। इस प्रकार, एम-लर्निंग तक आते-आते शिक्षा 'कभी भी...कहीं भी' से आगे निकलते हुए अपने स्वरूप में 'कुछ भी...कोई भी' को भी जोड़ लेती है।

'शिक्षण कभी भी, कहीं भी; शिक्षार्थी कोई भी तथा शिक्षा कुछ भी'- इसे एम-लर्निंग प्रविधि के सबसे महत्त्वपूर्ण गुण के रूप में देखा जा सकता है। शिक्षा के क्षेत्र में तकनीक के प्रवेश ने अब तक शिक्षण-प्रणाली और शिक्षक के स्वरूप में बदलाव उपस्थित किया था, किन्तु एम-लर्निंग ने इससे आगे बढ़ते हुए शिक्षण-संस्थान और शिक्षार्थी के स्वरूप को भी बदल दिया। अब कोई भी शिक्षार्थी बन सकता है, इसके लिए उसे किसी शिक्षण-संस्थान में पंजीयन की आवश्यकता न रही। यही नहीं, वह कहीं भी शिक्षा हासिल कर सकता है, काम के दौरान, खाने-पीने के दौरान, ड्राइंग-रूम में या सफर में, बिस्तर पर या फिर वर्क-प्लेस पर। यहाँ उसकी समय-सारणी प्रधान है, उसकी सुविधा सर्वोपरि है। इस प्रकार शिक्षण का औपचारिक ढाँचा टूटा। सबसे दीगर बदलाव यह हुआ कि शिक्षण का स्वरूप अब एकांगी व उपदेशात्मक न रहा, वह संवादमूलक हुआ। एम-लर्निंग में सूचनाओं की परस्पर साझेदारी पर विशेष रूप से पफोकस किया जाता है। इसके लिए ई-मेल और एसएमएस का प्रयोग किया जाता है।

हाँ, यह अवश्य है कि शिक्षा के इस औनौपचारिक स्वरूप के रहते शिक्षार्थियों की प्रगति का स्पष्ट और सटीक मूल्यांकन का रास्ता कठिन हो जाता है। साथ ही साथ चूँकि सारी सूचनाओं की उपलब्धता उपकरणों पर हमेशा बनी रहती है, इसलिए शिक्षार्थियों की गैजेट-निर्भरता बढ़ जाती है और उनकी ग्रहण व संकलन-क्षमता पर भी इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। पुराने समयों में विद्यार्थी ज्ञान का संकलन किया करते थे, पाठ को कंठस्थ करना, रट्टा मारना आदि बहुत पुराने जमाने की बात नहीं हैं। जिस व्यक्ति की स्मरण-शक्ति तीक्ष्ण होती थी, वह काबिले-तारीफ माना जाता था। अपनी स्मरण-शक्ति को बढ़ाने के लिए लोग यत्न किया करते थे। लेकिन इंटरनेट के इस युग में अचानक ही ये सारे उपक्रम गुजरे जमाने के हो गये हैं। हम इस प्रकार गैजेट निर्भर हो चुके हैं कि अपने परिचितों के जन्मदिनों को मोबाइल में फिट रिमाइंडर द्वारा याद करते हैं।

इसके अतिरिक्त शिक्षा के लिए जिस न्यूनतम अनुशासन की हमेशा से दरकार रही है, उसका अभाव भी इस प्रविधि में लक्षित किया जा सकता है। इसके अलावा एम-लर्निंग का विस्तार चूँकि किसी भी देश और संस्कृति की सीमा में आबद्ध नहीं, इसलिए एक तरफ तो इसे एम-लर्निंग के गुण के रूप में देखा जा सकता है, दूसरी तरफ अवगुण के रूप में भी। सांस्कृतिक परिवेश का वैविध्य शिक्षार्थियों के लिए शिक्षण में दुरूहता का योग करता है। और सबसे बढ़कर, एम-लर्निंग की प्रविधि न्यूनतम तकनीकी दक्षता की माँग करती है। इस तकनीकी दक्षता के बगैर इसका समुचित लाभ नहीं उठाया जा सकता।

कहा जा चुका है कि डी-लर्निंग (डिस्टैंट लर्निंग) की तर्ज पर ही क्रमशः ई-लर्निंग व एम-लर्निंग की अवधारणाओं का निर्माण हुआ। एम-लर्निंग को मूलतः ई-लर्निंग के ही विकासात्मक अवस्था के तौर पर देखा जा सकता है। दोनों में कतिपय साम्य हैं, तो विभिन्नता के भी बिन्दु हैं। सर्वप्रथम दोनों ही शिक्षार्थी-केन्द्रित प्रविधियाँ हैं, जिनमें शिक्षार्थी के हितों का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है। इसके अतिरिक्त दोनों प्रविधियों में ही तकनीकी संयन्त्रों, यथा पीडीए, लैपटॉप, नोटबुक आदि का प्रयोग किया जाता है। आज के युग में कम्प्यूटर की तरह ही मोबाइल संयन्त्रों द्वारा भी एक साथ कई ऑपरेशनों को सम्पन्न किया जा सकता है, इसलिए इस मामले में भी दोनों में कोई विशेष भेद नहीं है। दोनों के लिए बेतार के नेटवर्क की आवश्यकता है और दोनों ही क्लासरूम से बाहर की शिक्षण-प्रविधियाँ हैं तथा इस अर्थ में डी-लर्निंग की ही वंशज हैं। फर्क यही है कि डी-लर्निंग और किसी हद तक ई-लर्निंग में भी शिक्षा का संस्थानीकृत स्वरूप बना रहा था, किन्तु एम-लर्निंग ने शिक्षण को पूर्णतया अ-संस्थानीकृत स्वरूप प्रदान कर दिया है।

gorkysingh@gmail.com

`शिक्षण कभी भी, कहीं भी; शिक्षार्थी कोई भी तथा शिक्षा कुछ भी'- इसे एम-लर्निंग प्रविधि के सबसे महत्त्वपूर्ण गुण के रूप में देखा जा सकता है। शिक्षा के क्षेत्र में तकनीक के प्रवेश ने अब तक शिक्षण-प्रणाली और शिक्षक के स्वरूप में बदलाव उपस्थित किया था, किन्तु एम-लर्निंग ने इससे आगे बढ़ते हुए शिक्षण-संस्थान और शिक्षार्थी के स्वरूप को भी बदल दिया। अब कोई भी शिक्षार्थी बन सकता है, इसके लिए उसे किसी शिक्षण-संस्थान में पंजीयन की आवश्यकता न रही। यही नहीं, वह कहीं भी शिक्षा हासिल कर सकता है, काम के दौरान, खाने-पीने के दौरान, ड्राइंग-रूम में या सफर में, बिस्तर पर या फिर वर्क-प्लेस पर।

इलेक्ट्रॉन त्वरक

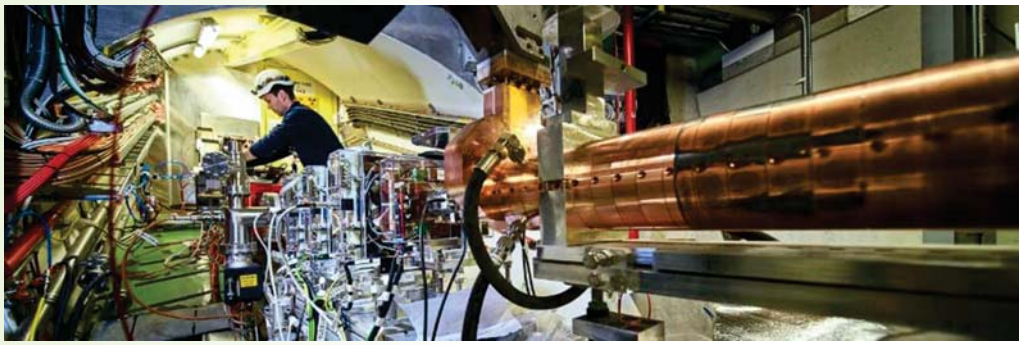

डॉ. कुलवंत सिंह

आई.आई.टी, रुड़की से बी.टेक. की उपाधि अर्जित करने के बाद भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में कार्यरत। मुंबई विश्वविद्यालय से पी. एचडी करने के बाद आप बी.ए. आर.सी. के पदार्थ विज्ञान प्रभाग में 'वैज्ञानिक 'एच' के रूप में अपनी सेवाएं दे रहे हैं। हिंदी कवि तथा अच्छे अनुवादक होने के साथ-साथ हिंदी में विज्ञान लेखन में आपकी गहरी रुचि हैं। आप के कई विज्ञान लेख तथा काव्य रचनाओं की 5 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

कण त्वरक आमतौर पर जटिल और महंगी मशीनें हैं। इन्हें विकसित करने में और उन्नत बनाने के लिए किए गए प्रयासों में अपार धन और जनशक्ति का उपयोग हुआ है। यह केवल एक गहन वैज्ञानिक प्रेरणा के साथ ही प्राप्त किया जा सकता था। जिसके लिए शुरुआती दिनों से ही पदार्थ की संरचना का ज्ञान इसका विशेष आधारभूत बना। लेकिन त्वरक के लिए अन्य उपयोगों की खोज के साथ ही इसे व्यापक विस्तार मिला। एक रैखिक त्वरक को लीनैक (Linear Accelerator) भी कहा जाता है। एक रैखिक त्वरक में, इलेक्ट्रॉनों को उच्च ऊर्जा के लिए त्वरित किया जाता है और मशीन से एक इलेक्ट्रॉन बीम के रूप में बाहर निकाला जाता है या एक्स किरणों का उत्पादन करने के लिए एक Z उच्च लक्ष्य पर टकराया जाता है। मेगा वोल्ट एक्स किरणों के सुविधाजनक उत्पादन के लिए रैखिक त्वरक अपेक्षाकृत एक छोटा उपकरण है। कम्प्यूटर नियंत्रण एवं कई ऊर्जाओं के साथ एक्स-रे और इलेक्ट्रॉन बीम दोनों की उत्पत्ति की क्षमता, रैखिक त्वरक को एक बहुउपयोगी उपकरण बनाती है। इन क्षमताओं के कारण अमेरिका में अनेक Co-60 टेलीथेरेपी मशीनों को रैखिक त्वरक के साथ बदल दिया गया है।

इलेक्ट्रॉन किरण-पुंज (बीम) के अनुप्रयोग

आवेशित-कण त्वरक विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। पदार्थ प्रसंस्करण उन क्षेत्रों में से एक है जिसे त्वरक द्वारा बहुत अधिक प्रभावित किया गया है। इसका श्रेय इलेक्ट्रॉन बीम को जाता है। कुछ सौ keV से लेकर कई MeV तक की ऊर्जा और कुछ सौ वाट से कुछ सौ किलोवॉट तक की शक्तियां इस उद्देश्य के लिए बड़े पैमाने पर काम में लाई गई हैं। 0.5MeV की ऊर्जा के साथ इलेक्ट्रॉनबीम और 10 किलोवाट की शक्ति का उपयोग विलेपनो(कोटिंग्स), चिपकने वाले पदार्थों और पेंट के सुखाने के लिए किया जाता है। ऊष्मा द्वारा सिकुड़ने वाले पदार्थों के उपचार के लिए 0.3 MeV से 2 MeV इलेक्ट्रॉनों को प्रयुक्त किया जाता है। स्नेहन में सुधार करने के लिए टेफ्लॉन का उपचार 2 MeV और 10 kW बीम के साथ किया जाता है। हीरों को आकर्षक रंग देने के लिए 7 MeV तक इलेक्ट्रॉनों का उपयोग किया जाता है। रबर की सामर्थ्य को बढ़ाने के लिए इसे 2 MeV और 30 kW के इलेक्ट्रॉनों की बीम से उपचारित किया जाता है। केबलों के क्रॉस लिंकिंग, खाद्य परिरक्षण, चिकित्सीय उपकरणों के कीटाणु-नाशन, गाढ़े रेयॉन के संसाधन (प्रोसेसिंग) आदि के लिए 10MeV तक के बीम का नियमित उपयोग किया जा रहा है। यहां तक कि सीवेज (मलप्रवाह) और कीचड़ के रोग जनक जीवाणुओं का 1 MeV और 100 kW के इलेक्ट्रॉनों बीम से नष्ट किया जा सकता है। इसके अनुप्रयोग लगातार बढ़ रहे हैं।

त्वरक का सिद्धांत

यह एक ऐसी युक्ति है, जो किसी आवेशित कण (जैसे इलेक्ट्रान, प्रोटान, अल्फा कण आदि) का वेग बढ़ाने (या त्वरित करने) के काम में आती है। वेग बढ़ाने (और इस प्रकार ऊर्जा बढ़ाने) के लिये वैद्युत क्षेत्र का प्रयोग किया जाता है, जबकि आवेशित कणों को मोड़ने एवं फोकस करने के लिये

चुम्बकीय क्षेत्र का प्रयोग किया जाता है। त्वरित किये जाने वाले आवेशित कणों का समूह या किरण-पुंज (बीम) धातु या सिरैमिक के एक पाइप से होकर गुजरती है, जिसमें निर्वात (Vacuum) बनाकर रखना पड़ता है ताकि आवेशित कण किसी अन्य अणु से टकराकर नष्ट न हो जायें। टीवी आदि में प्रयुक्त कैथोड किरण ट्यूब (CRT) भी एक अति साधारण कण-त्वरक ही है। जबकि लार्ज हैड्रानकोलाइडर विश्व का सबसे विशाल और शक्तिशाली कण त्वरक है। कण त्वरकों का महत्व इतना है कि उन्हें 'अनुसंधान का इंजन' (इंजन ऑफ डिस्कवरी) कहा जाता है। 'इन्डस-2' भारत का 2.5GeV सिन्क्रोट्रान विकिरण स्रोत (SRS) कण-त्वरक ऐसी मशीन है, जिसके द्वारा आवेशित कणों की गतिज ऊर्जा बढ़ाई जाती है।

रैखिक त्वरक संचालन का सिद्धांत है - क्रमिक माइक्रोवेवफ़ील्ड के उपयोग से एक वेवगाइड में इलेक्ट्रॉनोंको त्वरित करना। दो बुनियादी वेवगाइड डिज़ाइन मौजूद हैंः स्थिर तरंग और गतिमान तरंग। वेवगाइड की लंबाई अधिकतम त्वरण ऊर्जा और माइक्रोवेव की आवृत्ति का फलन है।

त्वरक का इतिहास

सर अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने परमाणु की जांच करने के लिए अल्फा कणों का इस्तेमाल किया और नाभिक का परिचय देते हुए इसकी स्वीकार्य अवधारणा को पूरी तरह से बदल दिया। छोटे आयामों का अध्ययन करने के लिए आवश्यकता थी - ऊर्जावान कणों की, जो प्राकृतिक रेडियोधर्मी स्रोतों में उपलब्ध नहीं थे। रॉयल सोसाइटी के अपने अध्यक्षीय भाषण में, 1927 में रदरफोर्ड ने आग्रह किया, 'मैं लंबे समय से इस आशा में हूँ कि प्राकृतिक रेडियोधर्मी पदार्थों से उत्सर्जित होने वाले कणों की ऊर्जा की तुलना में अधिक ऊर्जावान धनात्मक कणों का कोई स्रोत हो'। उस समय दो विचार पहले से ही उपलब्ध थे -इस्सिंगका रैखिक त्वरक और विडरोका किरण ट्रांसफार्मर। त्वरित कणों के उत्पादन के पहले प्रयास इलेक्ट्रोस्टैटिक त्वरक पर आधारित थे। लेकिन बड़ी चुनौती थी पर्याप्त उच्च वोल्टेज का उत्पादन। रदरफोर्ड द्वारा उपयोग किए गए रेडियोधर्मी स्रोतों से उत्सर्जित अल्फा कणों की अधिकतम ऊर्जा 10 MeV तक थी। इसलिए पारम्परिक तर्क था कि नाभिक तक पहुँचने के लिए कम से कम इतनी ऊर्जा की आवश्यकता होगी। यह एक तरह से निराशाजनक था, क्योंकि इस तरह का वोल्टेज पूरी तरह से पहुँच से बाहर था। लेकिन क्वांटम यांत्रिकी के विकास के साथ, जॉर्जगेमो ने सुरंग बनाने की अवधारणा को पेश किया और रेडियोधर्मी अल्फा क्षय को समझाने में मदद की। उन्होंने तब तर्क को उल्टा कर दिया और दिखाया कि लगभग 300 KeV ऊर्जा एक परमाणु अभिक्रिया को प्रेरित करने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए। इससे प्रेरणा पाकर कोकक्रॉफ्ट और वाल्टन ने इस वोल्टेज तक पहुँचने के लिए एक इलेक्ट्रो-स्टैटिक जनरेटर का निर्माण किया।

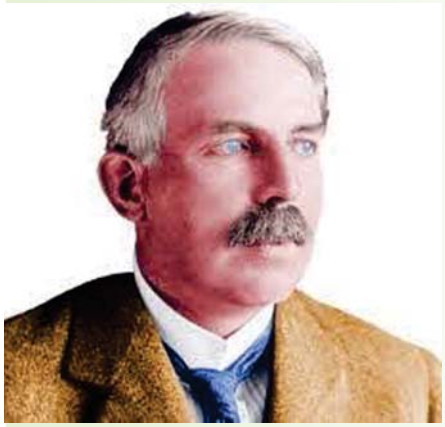

सर अर्नेस्टरदरफोर्ड

इलेक्ट्रो-स्टैटिक जनरेटर

कण त्वरक की आवश्यकता केवल रदरफोर्ड ने ही महसूस नहीं की। रॉबर्ट वैनडीग्रेफ, जो सोरबोन में भौतिकी का अध्ययन करने वाले एक युवा मैकेनिकल इंजीनियर थे, 1924 में लुइस डी ब्रोगली के एक व्याख्यान में शामिल हुए। जिसमें ब्रोगली ने एक ऐसी मशीन की उम्मीद की जिसका उपयोग परमाणु नाभिक के नियंत्रित अध्ययन के लिए किया जा सकता हो। इस व्याख्यान ने वैनडेग्रेफ को प्रेरित किया, उन्होंने 1925 से 1929 के बीच ऑक्सफोर्ड में रहते हुए इस अवधारणा को विकसित किया, जिसे अब वैनडीग्रेफ जनरेटर के रूप में जाना जाता है। प्रिंसटन में, 1929 में, उन्होंने एक प्रोटोटाइप बनाया जो 80kV पर काम करता था। एक टर्मिनल में आवेश जमा करके,एक चलती हुई डाइ-इलेक्ट्रिक (परावैद्युत) बेल्ट द्वारा एक वोल्टेज स्रोत से यांत्रिक रूप से उसका परिवहन - उनका विचार अद्वितीय था और अभी भी यहउपयोग में है। 1.5 MeV पर संचालित उनका पहला उपकरण 1931 में

लुइस डी ब्रोगली

प्रकाशित हुआ था, जिसका शीर्षक था 'नाभिकीय अन्वेषण के लिए उच्च वोल्टेज'। इसमें उच्च वोल्टेज उत्पादन पर प्रकाश डाला गया। 1935 में तुवेने वाशिंगटन के कार्नेगीइंस्टीट्यूशन के स्थलीय चुंबकत्व विभाग में परमाणु भौतिकी अध्ययन के लिए प्रोटॉनको त्वरित करने के लिए एक वैनडीग्रेफ जनरेटर का उपयोग किया। कॉकरोफ्ट और वाल्टन ने पहली बार 1932 में एक मानव निर्मित डिवाइस द्वारा त्वरित कणों से एक परमाणु अभिक्रिया की। कॉकरोफ्ट और वाल्टन ने 600-kV वोल्टेज वाला कॉलम विकसित किया, जो प्रोटॉन को त्वरित करने के लिए उपयोग किए जाने वाले त्वरित स्तंभ से जुड़ा था।

प्रथम परिसंचारी त्वरकः साइक्लोट्रॉन

इलेक्ट्रो-स्टैटिक त्वरक सफल रहे और आज भी कई अनुप्रयोगों में उपयोग किए जाते हैं। लेकिन उनकी सीमाएं हैं, अतिउच्च वोल्टेज इसका एक प्रमुख कारण है। 1924 में एक स्वीडिश भौतिक विज्ञानी, गुस्ताव इस्सिंग ने एक रैखिक त्वरक की सैद्धांतिक अवधारणा का प्रस्ताव दिया, एक उपकरण जो मध्यम वोल्टेज के चरणों की एक श्रृंखला के द्वारा कणों को बहुत उच्च वोल्टेज के बराबर गति प्रदान कर सकता था। 1922 में रॉल्फविडरो, कार्लस्रू में एक युवा नॉर्वेजियनपीएचडी छात्र ने 'रे ट्रांसफॉर्मर' नाम की अवधारणा विस्तार से बनाई, जिसे बाद में डोनाल्ड केर्स्ट द्वारा बीटाट्रॉन विकसित करने के लिए लागू किया गया। रॉल्फ विडरो ने इस्सिंग के काम के आधार पर पहला रैखिक त्वरक बनाया। उच्च आवृत्ति बिजली की आपूर्ति की कमी ने इस

पहले रैखिक त्वरक प्रयास को 'सैद्धांतिक प्रमाण' बना दिया, क्योंकि यह पोटेशियम आयनों को सिर्फ 50केवी तक ही त्वरित कर पाया। इस कामको अर्नेस्टलॉरेंस ने अंजाम दिया और साइक्लोट्रॉन का जन्म हुआ, एक बहुत ही सफल प्रकार का त्वरक। रॉल्फ विडरो कितने अभिनव थे इस बात से अंदाजा लगा सकते है कि 1943 में ही उन्होंने स्थिर लक्ष्य पर बमबारी के बजाय कण बीम के परस्पर टकराने का विचार रखा (और इसके लिए एक पेटेंट प्राप्त किया)। इस विचार को अमली जामा पहनाने में 18 साल लग गए, जब इलेक्ट्रॉन-पॉज़िट्रॉन कोलाइडर ने फ्रैस्कैटी, इटली में ऑपरेशन शुरू किया। कई अन्य कोलाइडर (इलेक्ट्रॉन-इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन-प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन-पॉज़िट्रॉन, आयन-आयन) फिर बनाए गए, और यह आज मानक मॉडल और इसकी सीमाओं के अध्ययन में अग्रणी उपकरण हैं।

लेकिन हम बात करेंगे सिर्फ इलेक्ट्रॉन त्वरक पर। इसलिए हम साइक्लोट्रॉन को छोड़ देंगे, क्योंकि वे इलेक्ट्रॉनों को गति देने के लिए अनुकूल नहीं हैं। लेकिन इसके इतिहास में बीटाट्रॉन बहुत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि उनके विकास ने अन्य परिसंचारी त्वरक जैसे कि सिंक्रोट्रॉन और माइक्रोट्रॉन के विकास की नींव रखी।

बीटाट्रॉन में हालांकि कोई त्वरित गुहा (Cavity) नहीं थी, लेकिन यह एक पहली गोलाकार मशीन थी जिसमें त्वरित इलेक्ट्रॉनों की बढ़ती ऊर्जा के साथ फ़ील्ड में वृद्धि होती थी। वांछित गोलाकार कक्ष पर इलेक्ट्रॉनों को रखने के लिए डिजाइनरों को दोलन के तरीकों को समझना जरूरी था। दोनों प्रकार के दोलन - क्षैतिज और लंबवत, उस गोलाकार पथ के चारों ओर जिनका वे अनुसरण करने वाले थे। वह 'बीटाट्रॉन दोलन', जैसा कि उन्हें अभी भी जाना जाता है, बहुत बड़े मशीनों (जैसे कि सिंक्रोट्रॉन और स्टोरेज रिंग) में बीम के मूल व्यवहार को समझने में अति महत्वपूर्ण हैं।

1925 और 1938 के बीच एक सर्कुलर इंडक्शन मशीन बनाने की कई असफल कोशिशें हुईं।1939 में, इलिनोइस विश्वविद्यालय में, डोनाल्डकेर्स्ट और रॉबर्टसर्बर ने स्थानिक और समय-भिन्न क्षेत्रों के तहत इलेक्ट्रॉनों की गति पर वाल्टन द्वारा पिछले सैद्धांतिक काम को

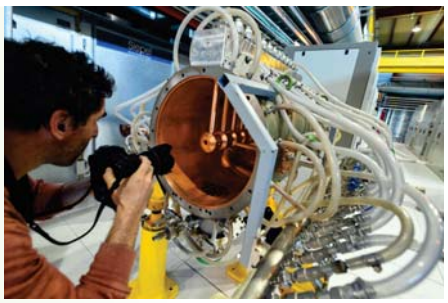

बढ़ाया। 1941 में प्रकाशित इस कार्य ने न केवल पहले ऑपरेटिंग बीटाट्रॉन का निर्माण किया, बल्कि भविष्य के सभी गोलाकार त्वरक में कण गति के विश्लेषण के लिए एक ठोस आधार के रूप में भी काम किया। पहले बीटाट्रॉन में 7.5-सेमी त्रिज्या की ट्यूब थी जो 2.3 MeV इलेक्ट्रॉनों का उत्पादन करता था, जो रेडियम के एक क्यूरीके दसवें हिस्से के बराबर एक्स-रे बनाता था। बाद में इसमें कुछ क्यूरी के बराबर तक सुधार हुआ। यह तुलना इसलिए दिलचस्प है कि उस समय के इलेक्ट्रॉन त्वरक कैसे थे, जो चिकित्सा और अविनाशी (नॉन-डेस्ट्रक्टिव) परीक्षण अनुप्रयोगों के लिए एक्स-रे उत्पादन करने के लिए थे। इस प्रारंभिक उपलब्धि के बाद, केर्स्ट ने विश्वविद्यालय से एक साल की छुट्टी ली और जनरल इलेक्ट्रिक लैब्स में शामिल हो गए, जहां उन्होंने 20 और 100 MeV के दो बीटाट्रॉन बनाए। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान उन्होंने मैदानों में बिना फटे हुए बमों के निरीक्षण के लिए 4 MeV पोर्टेबल बीटाट्रॉन का निर्माण किया। युद्ध के बाद केर्स्ट ने, वापस इलिनोइस विश्वविद्यालय में, एक 80-MeV मशीन का निर्माण किया, और फिर 1950 के आसपास, सबसे बड़ा बीटाट्रॉन 300 MeV का बनाया गया।

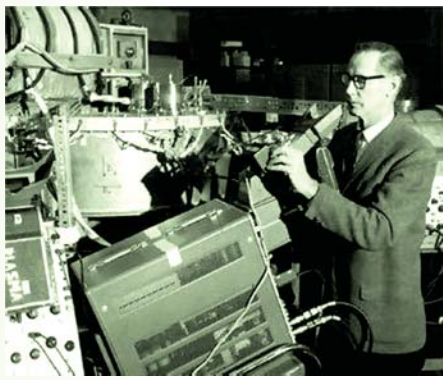

डोनाल्ड विलियम केर्स्ट

बीटाट्रॉन अल्पकाल के लिए थे। युद्ध के दौरान रेडियो और रडार प्रौद्योगिकी के विकास के लिए इलेक्ट्रॉन सिन्क्रोट्रॉन के निर्माण को प्रोत्साहन दिया गया जो उच्च-ऊर्जा इलेक्ट्रॉनों के त्वरण के लिए सस्ती और अधिक दक्ष तकनीक थी।

फेज स्थिरता और आर.एफ.त्वरण

साइक्लोट्रॉन और बीटाट्रॉन की उच्च वोल्टेज से जुड़ी समस्याओं को सुलझाने के बाद, त्वरक भौतिकविदों को अन्य मुद्दों का सामना करना पड़ा। साइक्लोट्रॉन और बीटाट्रॉन ने ऊर्जा में वृद्धि के लिए एक गंभीर समस्या खड़ी कर दी। चूंकि चुंबकीय क्षेत्र लगभग 2T तक सीमित थे, इसलिए ऊर्जा वृद्धि का तात्पर्य कक्षा की त्रिज्या में वृद्धि थी। अर्थात चुंबक के आकार को बढ़ाने की आवश्यकता थी। धीरे-धीरे बढ़ते आकार और कीमतें इसकी प्रगति में बाधक बनने लगीं। ऊर्जा परिसीमन की अन्य समस्याएँ भी आ खड़ी हुईं -साइक्लोट्रॉन के सापेक्ष द्रव्यमान में वृद्धि, प्रोटॉन को लगभग 30 MeV से ऊपर समकालिकता से बाहर कर देती है; एवं बीटाट्रॉन में परिक्रमा करने वाले इलेक्ट्रॉनों द्वारा उत्सर्जित विकिरण के कारण ऊर्जा की हानि।

इस विषय पर 1930 के दशक में दो अन्य उपकरण आविष्कार किए गए जो महत्वपूर्ण हैं। प्रथम - 1937 में वेरियन बंधुओं द्वारा अमेरिका में क्लेस्ट्रॉन का आविष्कार किया गया, जिसमें बाद में गिंज़टन ने सुधार किया। यह एक शक्तिशाली रेडियो आवृत्ति (आर.एफ.) एम्पलीफायर है, जिसका उपयोग इलेक्ट्रॉन रैखिक त्वरक (linacs) और सिंक्रोट्रान में आरएफगुहाओं (Cavities) के संभरण के लिए किया जाता है। द्वितीय -ब्रिटेन में रैंडल एंड बूट द्वारा बर्मिंधम विश्वविद्यालय में मार्क ओलिपंट के तहत काम करते हुए मैग्नेट्रोन का आविष्कार किया गया। इसका उपयोग 170 सेमी से कम तरंग दैर्ध्य पर रडार को शक्ति प्रदान करने के लिए किया गया। मैग्नेट्रॉन को त्वरक में आर. एफ.गुहाओं (Cavities) को शक्ति प्रदान करने के लिए सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है।

1945 में एक नया और महत्वपूर्ण सिद्धांत खोजा गया। 1945 की शुरुआत में, USSR में वेक्स्लर और 1945 के अंत में, अमेरिका में मैकमिलन ने इस सिद्धांत की व्याख्या की, जिसे अबफेज़ स्थिरता सिद्धांत

कहते हैं। इस विचार ने नए त्वरक(माइक्रोट्रॉन, सिंक्रोट्रॉन) के लिए द्वार खोल दिए, साथ ही दूसरे साइक्लोट्रॉन में सापेक्ष द्रव्यमान में वृद्धि के कारण परिसीमित ऊर्जा को बढ़ाने की अनुमति देता है।

पहला माइक्रोट्रॉन कनाडा में 1948 में बनाया गया। इस मशीन को तब 'इलेक्ट्रॉन साइक्लोट्रॉन' के रूप में भी जाना जाता था। कैविटी में उत्पन्न इलेक्ट्रॉनों को अंतराल में तेज किया गया, कैविटी को चुंबकीय क्षेत्र द्वारा वापस विक्षेपित और फिर से त्वरित करने के लिए छोड़ दिया गया। फेज़ स्थिरता में आवश्यकता है कि आर.एफ. आवृत्ति, परिक्रमण आवृत्ति का एक अभिन्न गुणक हो, ताकि एक पूर्ण कक्षा के बाद इलेक्ट्रॉन, त्वरण क्षेत्र के साथ फेज़ में कैविटी तक पहुंच सकें। इसमें अधिकतम ऊर्जा 4.6 MeV तक पहुँच गई। आगे के विकास (मोरोज़, 1958, रॉबर्ट्स, 1958, ब्रैनन और फ्रोइलिच, 1961) में इलेक्ट्रॉनों को अधिक दक्षता से त्वरित करने के लिए एक लीनैक (रैखिक त्वरक) जोड़ने के लिए खंडित मैग्नेट का उपयोग सम्मिलित है। कई माइक्रोट्रॉन आज ऑपरेशन में हैं। इसमें, जर्मनी के मेंज में गुटम्बरग यूनिवर्सिटी में MAMI C सबसे बड़ा है, जिसमें अधिकतम ऊर्जा 1.5 GeV तक है।

रैखिक त्वरक

आर.एफ. तकनीक के विकास से लीनैक (रैखिक त्वरक) को लाभ मिला। लुइस अल्वारेज़ ने 1948 में पहले उच्च-ऊर्जा (32 MeV) प्रोटॉन लीनैक का निर्माण किया। इलेक्ट्रॉन रैखिक त्वरक, प्रोटॉन रैखिक त्वरकसे अलग हैं। इलेक्ट्रॉन रैखिक त्वरक में आवृत्तियां अधिक होनी चाहिए (तीव्र गतिमान इलेक्ट्रॉनों के कारण) और इसलिए त्वरण कैविटी छोटी होनी चाहिए। इलेक्ट्रॉन रैखिक त्वरक (linacs) का विकास अमेरिका (स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय) और यू.के. (दूरसंचार अनुसंधान प्रतिष्ठान) में लगभग समानांतर हुआ। नवंबर 1946 यू.के. में डी.डब्ल्यू. फ्राई ने 45 सेमी लंबे, 0.5-MeV लीनैक के सैद्धांतिक डिजाइन, निर्माण और परीक्षण को पूरा किया गया। 1947 में अमेरिका में 0.9 मीटर लंबे, 1.5-MeV इलेक्ट्रॉन लीनैक को बनाया गया, जिसमें 3-गीगाहर्ट्ज का आर. एफ. मैग्नेट्रॉन शक्ति के रूप में उपयोग किया गया। 1948 के अंत तक 3.5MeV की ऊर्जा प्राप्त करने के बाद, ब्रिटिश स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा समर्थित फ्राई के समूह ने ब्रिटिश मेडिकल रिसर्च काउंसिल के रेडियो-थेरेप्यूटिक रिसर्च यूनिट और मेट्रो पॉलिटन इलेक्ट्रिकल इंडस्ट्रीज के साथ मिलकर नैदानिक के लिए एक्स-रे लीनैक का निर्माण शुरू किया। 8-MeV प्रोटोटाइप को हैमर स्मिथ अस्पताल, लंदन में स्थापित किया गया और पहले रोगी का इलाज अगस्त 1953 में किया गया। जब यह 8-MeV त्वरक निर्माणाधीन था, स्वास्थ्य मंत्रालय ने इंग्लैंड में कुछ रेडियो थेरेपी केंद्रों को 4-MeV रैखिक त्वरक (linacs) आपूर्ति करने का निर्णय लिया। इसके लिए पी.हावर्ड-फ़्लैंडर्स ने 1949 में त्वरक के लिए एक आइसो-सेंट्रिक गैन्ट्रीमाउंट के डिजाइन की कल्पना की। इसी तरह का एक कार्यक्रम अमेरिका में स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ रहा था। 1950 में स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी मेडिकल सेंटर के गिंज़टन और एच.एस.कापलान के बीच सहयोग शुरू हुआ, ताकि चिकित्सीय रैखिक त्वरक (लीनैक) का निर्माण किया जा सके। पहली मशीन 1954 में का पलान के रेडियोलॉजी विभाग में स्थापित की गई थी। यह 6-MeV लीनैक था।

इलेक्ट्रॉन साइक्लोट्रॉन

इलेक्ट्रॉनलिनेक्स और रेडियोथेरेपी के बीच यह एक बहुत ही सफल संबंध की शुरुआत थी। तब से इसके सुगठन, विश्वसनीयता और सटीकता में बहुत प्रगति हासिल की गई है। आज चिकित्सा प्रयोजनों के लिए उपयोग किए जाने वाले त्वरक में लगभग 80% इलेक्ट्रॉन लिनेक्स हैं, जिनमें बड़ी संख्या में साइक्लोट्रॉन का उपयोग रेडियो-फार्मास्युटिकल दवाओं के उत्पादन के लिए किया जा रहा है।

भारत में इलेक्ट्रॉन त्वरक

'भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र' (BARC) ने 2 दशक से भी ज्यादा पहले इस दिशा में शुरुआत की थी। एक रूसी निर्मित, ILU6, 2 MeV ऊर्जा और 20 किलोवाट शक्ति की मशीन इलेक्ट्रॉन बीम द्वारा प्रक्रियाओं के अध्ययन के लिए खरीदी गई थी। यह त्वरक वाशी, नवी मुंबई में स्थित है। इस मशीन के द्वारा, केबलों के क्रॉसलिंकिंग, हीरों के विकिरण, टेफ्लॉन के क्षरण, ऊष्मा के सिकुड़ने योग्य पदार्थों के उपचार आदि सहित कई प्रक्रियाएँ विकसित की गईं। भारतीय उद्योग ने पारंपरिक तकनीकों की अपेक्षाइस प्रौद्योगिकी के लाभ एवं असीम संभावनाओं को महसूस करना शुरू कर दिया। ऐसी मशीनों की मांग को देखते हुए, देश में ही इस मशीन को विकसित करने की आधारशिला रखी गई।

स्वदेशी विकास की शुरुआत 1995 के आसपास ट्रॉम्बे में हुई। विविध जरूरतों को पूरा करने के लिए, तीन ऊर्जा व्यवस्थाओं के बारे में सोचा गया था। सतह संशोधन प्रक्रियाओं के लिए कम ऊर्जा 500 keV, 10 किलोवाट, डीसी त्वरक। मध्यम ऊर्जा 3 MeV, 30 kW, DC त्वरक -क्रॉस लिंकिंग और ऊष्मा द्वारा सिकुड़ने योग्य पदार्थों के उपचार के लिए। उच्च ऊर्जा 10 MeV, 10 kW, RF रैखिक त्वरक- खाद्य परिरक्षण, हीरों के प्रसंस्करण आदि के लिए।

500 keV त्वरक

500 keV त्वरक को वर्ष 2000 में चालू किया गया था। यह त्वरकवाशी, नवी मुंबई में स्थापित है, एवं सतह संशोधन अनुप्रयोगों के लिए नियमित उपयोग में है। चूंकि यह केंद्र का ऐसा प्रथम उद्यम था, इसलिए कई तकनीकी दिक्कतें

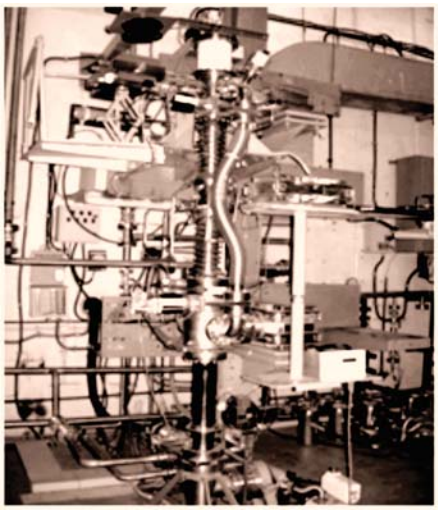

इलेक्ट्रॉनबीम केंद्र, खारघर,नवी मुंबई में 10MeV RF औद्योगिक इलेक्ट्रॉन त्वरक

सामने आईं। लेकिन यह हल कर ली गईं और सिस्टम को परिपूर्ण बनाया गया। त्वरक नियमित रूप से 450 keV पर 5 किलोवाट बीम उत्पन्न करता है।

3 MeV डीसी इलेक्ट्रॉन बीम त्वरक

इसके बाद 3 MeV, 30 kW त्वरक बनाया गया। यहां काफी कुछ तकनीकी-वैज्ञानिक चुनौतियों का सामना किया गया। वोल्टेज गुणक 3.5 मीटर लंबे त्वरक स्तंभ के चारों ओर एक बेलनाकार-ज्यामिति में बनाया गया। बीम निष्कर्षण प्रणाली में टाइटेनियम विंडो, स्कैन चुंबक और स्कैन हॉर्न शामिल हैं। इलेक्ट्रॉन बीम के त्वरण के लिए आवश्यक 3 MV डीसी एक 74-चरण समानांतर-भरणधारिता-युग्मित, सोपानी दिष्टकारी (Capacitance-coupled, cascaded-rectifier) निकाय से प्राप्त किया गया। टर्बो-स्पटर-आयन पंपिंग सिस्टम की मदद से त्वरित स्तंभ में 10^{-7}Torr का निर्वात (Vacuum) बनाए रखा जाता है।

10 MeVआर.एफ. औद्योगिक इलेक्ट्रॉन त्वरक

10 MeV, 10 kW RF रैखिक त्वरक का विकास, सबसे चुनौतीपूर्ण कार्यों में से एक है, जिसे BARC द्वारा लिया गया। 10MeV आर. एफ. इलेक्ट्रॉन त्वरक में इलेक्ट्रॉन गन, इलेक्ट्रॉन गन परिवर्तक, लीनैक गुहा, क्लेस्ट्रॉन-आधारित RF स्रोत, पल्स पावर परिवर्तक, स्कैन चुंबक, स्कैन हॉर्न, बीम निष्कर्षण विंडो, कन्वेयर सिस्टम, रिमोट कंट्रोल और मॉनिटर, बीम अभिलक्षणन, विकिरण नियंत्रण शामिल हैं। 2856 मेगाहट्र्ज की एक आर.एफ। आवृत्ति के लिए लीनैक के डिजाइन की कल्पना की गई। त्वरक का मुख्य घटक आर.एफ. गुहा है, जिसे माइक्रोवेव पावर स्रोत द्वारा 6 मेगावाटकी शिखर और 24 किलोवाट की औसत पावर दी जाती है। उचित आर.एफ. गुणों को बनाए रखने के लिए, त्वरण गुहा के आकार गुंजाइश को 20-30μ के भीतर रखना पड़ता है। लीनैक 2856 MHz, 3.5 MW इनपुट पर काम करता है। लीनैक के लिए एक LaB6 कैथोड आधारित इलेक्ट्रॉनगन को डिजाइन और विकसित किया गया है। गन का परीक्षण 60 kV निष्कर्षण वोल्टेज पर 1000 mA करंट तक किया गया है। यह गन क्रियाशील है और नियमित रूप से 500-600 mA की किरण

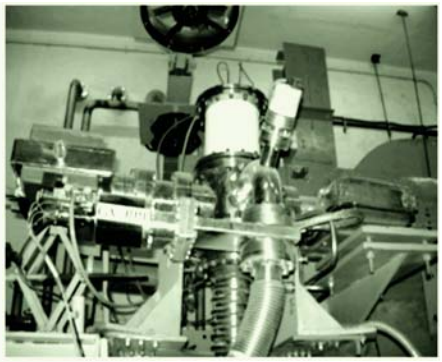

आर.एफ.रैखिक त्वरक पर जोड़ी हुई इलेक्ट्रॉन गन

पहुँचाती है। 50-60 kV, 2A आउटपुट के साथ आवश्यक इलेक्ट्रॉन गन मॉड्यूलेटर को BARC में डिजाइन और विकसित किया गया है।

इलेक्ट्रॉन बीम त्वरक के अनुसंधान और विकास के क्षेत्र में पूरी तरह से समर्पित और उद्योग में उनके अनुप्रयोगों के लिए एक इलेक्ट्रॉन बीम केंद्र खारघर, नवी मुंबई की स्थापना की गई। 3 MeV और 10 MeV दोनों त्वरक इसी केंद्र में रखे गए हैं। और इनका उपयोग नियमित रूप से किया जाता है। भविष्य में संशोधनों और सुधार के लिए आवश्यक सभी प्रकार की प्रयोगशालाओं से सुसज्जित यह एक स्वावलंबी केंद्र के रूप में कार्यरत है।

'परमाणु ऊर्जा विभाग' की इकाई 'राजा रामन्ना प्रगत प्रौद्योगिकी केन्द्र' (RRCAT), इंदौर में भी इसी तरह के स्वदेशी प्रयास किए जा रहे हैं। यहां, उनके द्वारा निर्मित 750 kV डीसी त्वरक है। इस केंद्र ने एक 12 MeV माइक्रोट्रॉन भी बनाया है, जिसका उपयोग भौतिक प्रसंस्करण के लिए किया जाता है। इसके अलावा रूस के साथ मिलकर एक 10 MeV लीनैक और 2-3 MeV DC मशीन विकसित की गई है। देश का निजी उद्यम इस तकनीक-विज्ञान की उपयोगिता को समझ चुका है। देश में कुछ निजी कंपनियों ने औद्योगिक प्रसंस्करण के लिए इस आधुनिक विज्ञान प्रौद्योगिकी पर आधारित संयंत्र भी लगाए हैं। औद्योगिक प्रसंस्करण के लिए इलेक्ट्रॉन बीम प्रसंस्करण जैसे अद्वितीय उद्यम, इस देश में स्थापित हो चुके हैं। 'परमाणु ऊर्जा विभाग' द्वारा शुरू किए गए प्रयास इस प्रकार अंततः इलेक्ट्रान बीम तकनीक और पदार्थों के प्रसंस्करण में एक अच्छे आधार के रूप में स्थापित हो रहे हैं।

'राजा रामन्ना प्रगत प्रौद्योगिकी केन्द्र', इन्दौर ने 'देवी अहिल्या बाई फल एवं सब्जी मण्डी', इन्दौर में एक इलेक्ट्रॉन बीम त्वरक प्रसंस्करण सुविधा विकसित कर लगाई है। यह एक 10 MeV, 5 किलोवाट की स्वदेशी इलेक्ट्रॉन त्वरक प्रदर्शन सुविधा है। उच्च ऊर्जा की इलेक्ट्रॉन बीम विभिन्न प्रकार के अनुप्रयोगों में उपयोगी है, जिसमें चिकित्सा उत्पादों का विसंक्रमण, कृषि उत्पादों का अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कृषि पादप-आरोग्य उपचार, उत्परिवर्ती प्रजनन के माध्यम से नई फसल किस्मों का विकास और नगर-पालिका अपशिष्ट के हानिकारक बैक्टीरिया से निपटान शामिल है। इस सुविधा में विभिन्न उत्पादों के इलेक्ट्रॉन बीम प्रसंस्करण का प्रदर्शन किया जा सकता है।इसके अतिरिक्त इलेक्ट्रॉन बीम प्रसंस्करण कोबाल्ट-60 (Co-60) जैसे रेडियो-आइसोटोप से अधिक सुरक्षित विकल्प है, क्योंकि इसमें किसी भी तरह की रेडियोधर्मिता शामिल नहीं है एवं इलेक्ट्रॉन त्वरक के बन्द होने के बाद किसी भी तरह के विकिरण का खतरा नहीं है। इस इलेक्ट्रॉन बीम प्रसंस्करण की उत्पादन क्षमता 5 किलो ग्रे टन प्रति घंटा है। इसमें उत्पाद प्रसंस्करण की आवश्यकता के आधार पर बहुत कम डोज100 ग्रे से लेकर बहुत अधिक डोज25 किलो ग्रे तक दिया जा सकता है। उत्पाद संचालन निकाय 60सेमी(ऊंचाई)X40सेमी (चौड़ाई)X 60सेमी (गहराई) तक के 10 से 20 किलोग्राम के बक्सों का परिवहन कर सकता है। एक बैच में उत्पाद के घनत्व तथा आयाम के अनुसार 10 से 30 बक्सों को संसाधित किया जा सकता है।

त्वरक और उत्पाद संचालन निकाय का संचालन कम्प्यूटर आधारित नियंत्रण प्रणाली के माध्यम से नियंत्रित होता है। उत्पादों को मिलने वाली मात्रा को मापने के लिए आयतनी मात्रा मापी सुविधाएं उपलब्ध है जो कि ईपीआर मात्रा मापी और रेडियोक्रोमिक फिल्मों पर आधारित मात्रा मापी निकाय है। त्वरक के संचालन के लिए एक विकिरण कोष्ठ, सुरक्षा प्रणाली, वायु संचालन निकाय, विद्युत शक्ति प्रणाली, उत्पाद भंडारण क्षेत्र, शीतलक प्रणाली आदि इस प्रसंस्करण सुविधा में प्रदान की गई हैं।

नवीन परिवर्तन

वर्तमान में हम दो मुख्य अनुप्रयोगों की पहचान कर सकते हैं, जिन्होंने इलेक्ट्रॉन त्वरक के विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अधिकांश विकास को प्रेरित किया है। पहला, चिकित्सा उपयोग, और दूसरा विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान के लिए एक्स-रे का उत्पादन। अधिक सटीक और अनुकूलन योग्य मशीनों की आवश्यकता के कारण इलेक्ट्रॉनों के त्वरण में नियंत्रण और दक्षता में काफी विकास हुआ। यहाँ तक कि अच्छी तरह से स्थापित रैखिक त्वरक में भी कठोर नियमन के चलते सुधार हुए हैं। इलेक्ट्रॉन त्वरक की सफलता ने कण त्वरक और परिधीय उपकरणों की प्रौद्योगिकी और विज्ञान में अविश्वसनीय प्रगति को प्रेरित किया है।

चिकित्सा अनुप्रयोगों में, कण त्वरक की प्रौद्योगिकी के विकास ने कैंसर के उपचार में बहुत प्रभाव डाला है और कैंसर के नियंत्रण और उपचार में काफी सुधार किया है। आधुनिक इलेक्ट्रॉन त्वरक इलेक्ट्रॉन बीम को विशेषताओं के साथ प्रदान करने में सक्षम हैं - जैसे कि ऊर्जा, ऊर्जा प्रसार, समान्तरण और दिशात्मकता। इससे सतही और गहरे दोनों प्रकार के ट्यूमर का इलाज विकिरण की मात्रा को नियंत्रित कर किया जा सकता है।

रैखिक त्वरक का उपयोग आमतौर पर चिकित्सा अनुप्रयोगों के लिए किया जाता है। लिनैक्स की तुलना में बेहतर ऊर्जा विभेदन और कम बिजली खपत के फायदे के कारण हालांकि, माइक्रोट्रोन त्वरक का उपयोग भी किया जाता है। माइक्रोट्रॉन में कक्षाओं का क्रम एक ऊर्जा फिल्टर के रूप में काम करता है जो एक संकीर्ण ऊर्जा स्पेक्ट्रम के साथ इलेक्ट्रॉन बीम का उत्पादन करता है। नतीजतन, अवशोषित मात्रा में वृद्धि और पैनी मात्रा प्राप्त होती है।

इलेक्ट्रॉन त्वरक का सबसे व्यापक उपयोग रेडियो-थेरेपी और नैदानिक चिकित्सा प्रयोजनों के लिए किया जा रहा है। जिसमें एक्स-रे का उत्पादन करने के लिए इलेक्ट्रॉन बीम का उपयोग किया जाता है। इस अनुप्रयोग में, एक निम्न विस्तारित ऊर्जित इलेक्ट्रॉन बीम को भारी धातु के लक्ष्य से टकराकर एक्स-रे फोटॉनों में परिवर्तित किया जाता है। अवशोषक का उपयोग करके कम ऊर्जा से होने वाले योगदान को फिल्टर कर स्पेक्ट्रम को आकार दिया जाता है। 5-30MeV एस-बैंड इलेक्ट्रॉन रैखिक त्वरक विकिरण चिकित्सा का मुख्य आधार हैं। रेडियो-थेरेपी के लिए दुनिया भर में लगभग 5000 इलेक्ट्रॉन त्वरक काम कर रहे हैं, जिनके मुख्य निर्माता वेरियन, सीमेंस, जनरल इलेक्ट्रिक, मित्सुबिशी और तोशिबा हैं।

औद्योगिक रैखिक त्वरक राजा रामन्ना प्रगत प्रौद्योगिकी केन्द्रमें विकसित किए गए हैं।

अवधारणा परिशोधन का एक उदाहरण बीम वितरण प्रणाली को उन्नत बनाना है। त्वरण के बाद बीम को उपचार कक्ष तक पहुंचाना और वहां, रोगी पर इसे उचित रूप से दिष्ट और अवस्थिति करना आवश्यक है। बीम ऑप्टिक्स में हुई प्रगति ने बीम डिलीवरी चुंबक प्रणालियों के लिए गहन अवधारणाओं को जन्म दिया है। यह विकिरण क्षेत्र के समतलता में विकृतियों को कम करती है, जो आपतित बीम के प्रक्षेप पथ में विचलन से हो सकती है।

गैन्ट्री में निहित विकिरण क्षेत्र के भौतिक चयन के लिए उपकरण उल्लेख करना महत्वपूर्ण है। विकिरण चिकित्सा में भौतिक चयन के अंतर्गत एक विशिष्ट लक्ष्य आयतन को विकिरण की मात्रा के लिए चुना जाता है। शुरुआती दौर में रेडियोथेरेपी के लिए इलेक्ट्रॉन त्वरक के साथआम तौर पर परिवर्ती समांतरित्र (Variable Collimator) को भौतिक चयन के लिए प्रयुक्त किया जाता था। जिसमें दो जोड़े जबड़े होते थे, जिन्हें हाथ से एक दूसरे की ओर या एक दूसरे से अलग ले जाया जा सकता था, जो आवश्यकता अनुसार वर्गाकार या आयताकार बीम को परिभाषित करता था। आधुनिक रेडियोथेरेपी मशीनें एक बहु-फलक समांतरित्र (मल्टी-लीफकोलीमेटर) से सुसज्जित हैं, जिसमें 20 पत्तियों के दो सेट होते हैं। प्रत्येक पत्ती का अपना मोटर ड्राइव और पोजिशन रीड आउट होता है, जिसे स्वतंत्र रूप से स्थानांतरित किया जा सकता है। जिससे जटिल आकार के लक्ष्य पर विकिरण को अनियमित आकार के बीम के रूप में बेहतर अनुकूलित किया जा सके। कुछ मशीनों में मरीज के अवांछित हिलने डुलने या श्वसन के कारण होने वाली हरकतों को ठीक करने के लिए इमेजिंग सिस्टम का उपयोग मल्टी -लीफ कंट्रोल सिस्टम के साथ फीडबैक के रूप में किया जाता है। चिकित्सा अनुप्रयोगों से प्रेरित, कोई अन्य क्षेत्र इतनी तेजी से इलेक्ट्रॉन त्वरक के तकनीकी विकास को आगे नहीं बढ़ा रहा है जितना कि सिंक्रोट्रॉन विकिरण के अनुप्रयोग। सिन्क्रोट्रॉन विकिरण के अद्वितीय गुणों जैसे कि विस्तृत-ऊर्जा सुसंगता, उच्च दीप्ति, चरम समान्तरण (Collimation), ध्रुवीकरण (Polaziration) और समय संरचना ने जैविक विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, संघनित-पदार्थ विज्ञान एवं अन्य कई क्षेत्रों में अनेक नई और महत्वपूर्ण तकनीकों को सक्षम किया है। जिससे अनेक क्षेत्रों में विकास और अनुसंधान के द्वार खुले हैं।

विकिरण स्रोतों के रूप में इलेक्ट्रॉन त्वरक

सिंक्रोट्रॉन विकिरण के उपयोगकर्ता आमतौर पर विकिरण स्रोतों के मापदंडों जैसे कि दीप्ति (औसत और शिखर दोनों), प्रवाह, उत्सर्जित बीम की सुसंगतता, में सुधार करने में और समयानुकूल प्रयोगों के लिए अति निम्न पुंज लंबाई प्राप्त करने में रुचि रखते हैं।

संक्षेप में, इलेक्ट्रॉन त्वरक विज्ञान के कई क्षेत्रों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। न केवल एक विकिरण स्रोत के रूप में, बल्कि इलेक्ट्रॉन त्वरक के कई अन्य औद्योगिक अनुप्रयोग भी हैं। इन मशीनों का उपयोग वैज्ञानिक, चिकित्सा और औद्योगिक दिनचर्या में दिनों दिन बढ़ता जा रहा है।

singhkw@barc.gov.in

माइक्रोबायोलॉजी

संजय गोस्वामी

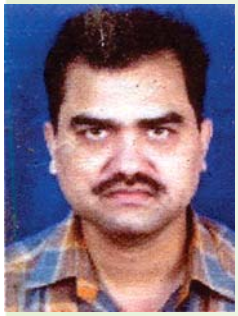

संजय गोस्वामी विगत पंद्रह वर्षों से विज्ञान लेखन से जुड़े हैं आपने हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में तीन सौ से अधिक कॅरियर लेख लिखे हैं जो विज्ञान विषयक होते हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में वे विगत लगभग पांच वर्षों से शृंखलाबद्ध लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान लेख, विज्ञान समाचार, विज्ञान कविता, विज्ञान रपट, विज्ञान समीक्षा आदि का लेखन और प्रकाशन हुआ है। कई पुरस्कारों से सम्मानित संजय गोस्वामी हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भा.प.अ. केन्द्र, मुंबई के कार्यकारी सदस्य हैं। आप इन दिनों मुंबई में रहकर हिन्दी विज्ञान पत्रिका में लेखन एवं संपादन से संबद्ध हैं।

माइक्रोबायोलॉजी जीवविज्ञान की एक शाखा है जो जीवाणु विज्ञान, माइकोलॉजी और वायरोलॉजी पर केंद्रित है। माइक्रोबायोलॉजी जीव विज्ञान का एक व्यापक क्षेत्र है जो सूक्ष्म जीव के फंक्शन, संरचना, और नकारात्मक प्रभाव व उपयोग के बारे में जानकारी प्रदान करता है। आप दही में बैक्टीरिया का उदाहरण भी देख सकते हैं। बैक्टीरियल सेल दूध को किण्वन प्रक्रिया का उपयोग करके दही में बदलने में मदद करता है। माइक्रोबायोलॉजी जीव विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों जैसे कि आणविक जीव विज्ञान, आनुवंशिकी और इम्यूनोलॉजी का अध्ययन करता है। माइक्रोबायोलॉजी यानि कीटाणु- विज्ञान, जिसने कई कल्पनाओं को मूर्त रूप दिया है। इस क्षेत्र में हुए इनोवेशन माइक्रोस्कोप की वजह से हुआ, एक माइक्रोबायोलॉजिस्ट 0.20 माइक्रॉन या उससे भी कम आकार के सूक्ष्म जीवाणु को देख सकता है, उसका अध्ययन कर सकता है। माइक्रोबायोलॉजी, बायोलॉजी की एक ब्रांच है जिसमें प्रोटोजोआ, ऐल्गी, बैक्टीरिया, वायरस जैसे सूक्ष्म जीवाणुओं (माइक्रोऑर्गेनिज्म) का अध्ययन किया जाता है। इसमें माइक्रोबायोलॉजिस्ट इन जीवाणुओं (माइक्रोब्स) के इंसानों, पौधों और जानवरों पर पड़ने वाले पॉजिटिव और निगेटिव प्रभाव को जानने की कोशिश करते हैं। बीमारियों की वजह जानने में ये मदद करते हैं। इसके अलावा जीन थेरेपी तकनीक के जरिये वे इंसानों में होने वाले सिस्टिक फिब्रियोसिस, कैंसर जैसे दूसरे जेनेटिक डिसऑर्डर्स के बारे में भी पता लगाते हैं। माइक्रोबायोलॉजिस्ट आसपास के एरिया, इंसान, जानवर या फील्ड लोकेशन से सैंपल इकट्ठा करते हैं। फिर उन पर माइक्रोब्स को ग्रो करते हैं और स्टैंडर्ड लेबोरेट्री टेक्निक से एक विशेष माइक्रोब को अलग करते हैं। मेडिकल माइक्रोबायोलॉजिस्ट खासतौर पर इस तरह की प्रक्रिया अपनाते हैं।

सूक्ष्मजीव

वे जीव हैं जो बहुत छोटे हैं, जिन्हें बैक्टीरिया, वायरस और कवक जैसी नग्न आंखों से नहीं देखा जा सकता है। फार्मेसी, मेडिसिन, क्लिनिकल रिसर्च, एग्रीकल्चर, डेयरी इंडस्ट्री, वॉटर इंडस्ट्री, नैनो टेक्नॉलॉजी और केमिकल टेक्नॉलॉजी जैसे विभिन्न क्षेत्रों में माइक्रोबायोलॉजी की भागीदारी के कारण माइक्रोबायोलॉजी का दायरा बहुत बड़ा है। माइक्रोबायोलॉजिस्ट वे वैज्ञानिक हैं, जो जीवों और संक्रामक जीवाणु का अध्ययन करते हैं जिन्हें सुरक्षित आंखों से नहीं देखा जा सकता है। किसी भी जीवाणु rDNA का पता लगाने के लिए जिससे उस जीवाणु की पहचान हो सके पॉलिमरेज चेन रिएक्शन से देखा जा सकता है। बैक्टीरिया की शीघ्र और सटीक पहचान विधि का सिद्धांत सरल है। जब जीवाणु का पता लगाने के लिए डीएनए जीन का पीसीआर से शुद्ध डेटा बेस प्राप्त कर, अनुक्रमित और संरेखित किया जाता है, तो जीवाणु की पहचान की जा सकती है। पॉलिमरेज चेन रिएक्शन (पीसीआर) ने रोगजनकों के तेजी से पता लगाने के लिए एक उत्कृष्ट तकनीक है, जांच में वैज्ञानिक प्रगति की है। पारंपरिक पीसीआर तकनीकों के साथ, रियल-टाइम पीसीआर तकनीकी एक नवाचार के रूप में उभरा है और नैदानिक निदान और अनुसंधान प्रयोगशालाओं में लगातार अहम भूमिका निभा रहा है। मात्रात्मक परिणाम उत्पन्न करने की अपनी क्षमता के कारण नैदानिक निदान और अनुसंधान प्रयोगशालाओं में तेजी से उपयोग हो रहा है गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों

वे जीव हैं जो बहुत छोटे हैं, जिन्हें बैक्टीरिया, वायरस और कवक जैसी नग्न आंखों से नहीं देखा जा सकता है। फार्मेसी, मेडिसिन, क्लिनिकल रिसर्च, एग्रीकल्चर, डेयरी इंडस्ट्री, वॉटर इंडस्ट्री, नैनो टेक्नोलॉजी और केमिकल टेक्नोलॉजी जैसे विभिन्न क्षेत्रों में माइक्रोबायोलॉजी की भागीदारी के कारण माइक्रोबायोलॉजी का दायरा बहुत बड़ा है। माइक्रोबायोलॉजिस्ट वे वैज्ञानिक हैं, जो जीवों और संक्रामक जीवाणु का अध्ययन करते हैं जिन्हें सुरक्षित आंखों से नहीं देखा जा सकता है।

परिणाम उत्पन्न करने की अपनी क्षमता के कारण, रियल-टाइम पीसीआर को एक अच्छा और गुणता टेस्ट यंत्र माना जाता है। कभी भी टेस्टिंग यंत्र में सुग्राहिता न होने के कारण टेस्ट रिपोर्ट का रिजल्ट गलत आ जाता है जिसका खामयाजा रोगी को भुगतना पड़ता है इस स्थिति में या तो रोग का पता नहीं चलता है या फिर वह रोग ही न हो और बेवजह रोगी को अनावश्यक दवा खाना पड़ जाये जिससे उसका स्वास्थ पर बहुत ही बुरा असर पड़ता है आप कहीं अपना रक्त, पेशाब आदि का परीक्षण करने से पहले यह जरूर देख ले कि लैब एनएबीटीसी(परीक्षण और कैलिब्रेशन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड) से अनुमोदित है या नहीं। जैसे एक पूर्ण रक्त गणना(CBC) एक सामान्य रक्त परीक्षण जिसका उपयोग आपके समग्र स्वास्थ्य का मूल्यांकन करने और एनीमिया, संक्रमण हेमेटोक्रिट, आपके रक्त में द्रव घटक, या प्लाज्मा में लाल रक्त कोशिकाओं का अनुपात और ल्यूकेमिया सहित अन्य विकारों का पता लगाने के लिए किया जाता है। एक पूर्ण रक्त गणना परीक्षण आपके रक्त के कई घटकों और विशेषताओं को मापता है, जिसमें शामिल हैं- लाल रक्त कोशिकाएं, जो ऑक्सीजन ले जाती हैं उसे शरीर के विभिन्न अंगों की कोशिकाओं तक पहुंचाने का काम करती है। सफेद रक्त कोशिकाएं, जो संक्रमण से लड़ती हैं, हीमोग्लोबिन, लाल रक्त कोशिकाओं में ऑक्सीजन ले जाने वाला प्रोटीन हेमेटोक्रिट, आपके रक्त में द्रव घटक, या प्लाज्मा में लाल रक्त कोशिकाओं का अनुपात प्लेटलेट्स, जो रक्त के थक्के के साथ मदद करते हैं यदि रिपोर्ट में कोशिका की गणना में असामान्य वृद्धि या घट जाती है तो यह पता चलता है कि घटने के कारण एनीमिया अस्थि मज्जा है आरबीसी की गिनती स्लीप एपनिया, फुफुसीय और फाइब्रोसिस को जानने के लिए होता है अन्य स्थितियों के परिणामस्वरूप रक्त में कम ऑक्सीजन का स्तर होता है। डब्ल्यूबीसी की गिनती असामान्य वृद्धि के कारण शरीर में संक्रमण होता है जो जीवों और संक्रामक मूल्यांकन के लिए करती है। आपका डॉक्टर अपने समग्र स्वास्थ्य की आपके सामान्य स्वास्थ्य की निगरानी करने के लिए और एनीमिया या ल्यूकेमिया जैसे विभिन्न विकारों के लिए स्क्रीन करने के लिए एक नियमित चिकित्सा परीक्षा के हिस्से के रूप में एक पूर्ण रक्त गणना की सिफारिश करता। यदि आप कमजोरी, थकान, बुखार, सूजन, चोट या रक्तस्राव का अनुभव कर रहे हैं, तो आपका डॉक्टर चिकित्सा स्थिति का निदान करने के लिए एक पूर्ण रक्त गणना रक्त परीक्षण सुझा सकता है। एक पूर्ण रक्त गणना इन संकेतों और लक्षणों के कारण का निदान करने में मदद कर सकती है। यदि आपके डॉक्टर को संदेह है कि आपको संक्रमण है, तो परीक्षण उस निदान की पुष्टि करने में भी मदद कर सकता है। चिकित्सा स्थिति की निगरानी के लिए। यदि आपको रक्त विकार का पता चला है जो रक्त कोशिका की गिनती को प्रभावित करता है, तो आपका डॉक्टर आपकी स्थिति की निगरानी के लिए पूर्ण रक्त गणना का उपयोग कर सकता है। चिकित्सा उपचार की निगरानी करने के लिए। यदि आप ऐसी दवाएँ ले रहे हैं जो रक्त कोशिका की गिनती को प्रभावित कर सकती हैं, तो आपके स्वास्थ्य की निगरानी के लिए एक पूर्ण रक्त गणना का उपयोग किया जा सकता है। इस क्षेत्र में विशेषज्ञता रखने वाले व्यक्ति को 'माइक्रोबायोलॉजिस्ट' कहा जाता है। माइक्रो-बायोलॉजिस्ट अन्य जीवों और मनुष्यों के साथ सूक्ष्मजीवों का अध्ययन करते हैं, जो हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं। माइक्रोबायोलॉजिस्ट की भूमिका यह सुनिश्चित करने के लिए है कि हमारा भोजन या नहीं, हरित तकनीक विकसित करना, बीमारी का इलाज करना और उसे रोकना या जलवायु परिवर्तन में रोगाणुओं की भूमिका पर नजर रखना। माइक्रोबायोलॉजिस्ट कई अलग-अलग नौकरी क्षेत्रों में काम करते हैं, विभिन्न नौकरी भूमिकाओं में। माइक्रोबायोलॉजिस्ट अनुसंधान और गैर-शोध क्षेत्रों में करियर बना सकते हैं। एक प्रसिद्ध जर्मन सूक्ष्म जीवविज्ञानी 'लुई पाश्चर' ने यह पता लगाने के लिए विभिन्न परीक्षण किए कि वाइन और डेयरी उत्पाद खट्टा क्यों हो जाते हैं। सामान्य एवं प्रयुक्त माइक्रोबायोलॉजी निम्नांकित रोग जनकों के जीवन इतिहास, रोग जनकता, नियंत्रण एवं उपचार, विषेशतः मनुष्यों के संदर्भ में -1. प्रोटोजोआ- एण्टअमीबा, ट्रीपेनोसोमा एवं

जियार्डिया 2. हेलमिथ - शीस्टोसोमा 3. निमैटोड (गोल कृमि)- मनुष्यों में रोग जनक परजीवी वैक्टर कीट के बारे में जानकारी को जुटाते हैं

विकल्प

माइक्रोबायोलॉजी की मांग निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों में हैं। सफल कैरियर बनाने के लिए माइक्रोबायोलॉजी में मास्टर ऑफ साइंस का पाठ्यक्रम पुरा करना चाहिए माइक्रोबायोलॉजी में मास्टर ऑफ साइंस (M.Sc) का कोर्स पूरा होने के बाद शीर्ष कंपनियों जैसे भारत बायोटेक, जैविक ई लिमिटेड, बाट्रोनिक्स, बायोसर्व, जीवीके बायोसाइंसेज प्राइवेट लिमिटेड, कैल्शियम बायोसोल्यूशन लिमिटेड, 1mg लैब में माइक्रोबायोलॉजिस्ट, वैज्ञानिक, प्रयोगशाला तकनीशियन, पैथोलॉजी तकनीशियन, क्लिनिक प्रबंधक, रक्त बैंकिंग प्रबंधक के पद पर काम कर सकतें हैं माइक्रोबायोलॉजिस्ट की सरकारी खाद्य उद्योग, दवा उद्योग, अस्पताल, रासायनिक उद्योग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र और अनुसंधान और विकास संगठन में भारी मांग है। माइक्रोबायोलॉजी में छात्र प्रथम श्रेणी में डेब कर अनुसंधान और विकास संगठन में वैज्ञानिको के पद पर काम करते हैं छात्र अपनी योग्यता को बढ़ाने के लिए माइक्रोबायोलॉजी कोर्स में आगे अध्ययन कर सकते हैं। माइक्रोबायोलॉजी के क्षेत्र में माइक्रो-बायोलॉजिस्ट, बैक्टीरियोलॉजिस्ट, एनवॉयर्न-मेंटल माइक्रो-बायोलॉजिस्ट, फूड माइक्रो-बायोलॉजिस्ट, इंडस्ट्रियल माइक्रोबायोलॉजिस्ट, मेडिकल माइक्रोबायोलॉजिस्ट, माइकोलॉजिस्ट, बायोकेमिस्ट, बायोटेक्नोलॉजिस्ट, सेल बायोलॉजिस्ट, इम्युनोलॉजिस्ट, वायरोलॉजिस्ट, इम्ब्रियोलॉजिस्ट आदि के रूप में अनुसंधान और विकास संगठन में करियर बना सकते हैं। यदि छात्र अनुसंधान में रुचि रखते हैं तो वे एम फिल या माइक्रोबायोलॉजी में पीएच-डी. कर सकते हैं। माइक्रोबायोलॉजिस्ट को निजी संस्थानों में नमूने का परीक्षण के अलावा प्रयोगशाला और उपकरण और उपकरण का दैनिक रिकॉर्ड, दैनिक पीएच मीटर और संतुलन अंशांकन, एसओपी तैयारी, स्वच्छ कमरे और अन्य नियंत्रित क्षेत्र की पर्यावरण निगरानी, पानी का नमूना और परीक्षण, फार्माकोपिया के अनुसार आरएम, एफपी, बल्क, पैकिंग सामग्री का एमएलटी टेस्ट, बाँझपन परीक्षण, बीईटी टेस्ट, मीडिया फिल, बीआईएस टेस्टत और रिकॉर्ड, प्रयोगशाला उपकरण और उपकरण का सत्यापन करना भी होता है।

कोर्स

- मेडिकल लेबोरेटरी टेक्नोलॉजी में डिप्लोमा (DMLT)- दो साल
- माइक्रोबायोलॉजी में विज्ञान स्नातक
- एप्लाइड माइक्रोबायोलॉजी में विज्ञान स्नातक
- औद्योगिक माइक्रोबायोलॉजी में विज्ञान स्नातक
- खाद्य प्रौद्योगिकी में विज्ञान स्नातक
- क्लिनिकल माइक्रोबायोलॉजी में विज्ञान स्नातक
- बीएससी-एम एल टी (इन पाठ्यक्रमों की अवधि तीन वर्ष है।)
- माइक्रोबायोलॉजी में मास्टर ऑफ साइंस
- एप्लाइड माइक्रोबायोलॉजी में मास्टर ऑफ साइंस
- मेडिकल माइक्रोबायोलॉजी में मास्टर ऑफ साइंस
- माइक्रोबियल आनुवंशिकी और जैव सूचना विज्ञान में मास्टर ऑफ साइंस

(इस क्षेत्र में मास्टर पाठ्यक्रम दो साल हैं)

मुख्य विषय

बीएससी माइक्रोबायोलॉजी में सूक्ष्मजीव, जल माइक्रोबायोलॉजी, दवा माइक्रोबायोलॉजी, माइक्रोबियल आनुवंशिकी, पर्यावरण माइक्रोबायोलॉजी, कीटाणु-विज्ञान, बायोलॉजी में विशेषज्ञता, कृषि माइक्रोबायोलॉजी औद्योगिक माइक्रोबायोलॉजी, विकासवादी माइक्रोबायोलॉजी, नैनो माइक्रोबायोलॉजी, सेलुलर माइक्रोबायोलॉजी, मृदा माइक्रोबायो-लॉजी, पशु चिकित्सा माइक्रोबायो- लॉजी, जनरेशन माइक्रोबायोलॉजी क्लिनिकल केमिस्ट्री (शरीर के तरल पदार्थों का रासायनिक विश्लेषण), रक्तविज्ञान (रक्त-संबंधी), इम्यूनोलॉजी (प्रतिरक्षा प्रणाली का अध्ययन), माइक्रोबायोलॉजी (बैक्टीरिया और अन्य रोग फैलाने वाले जीवों का अध्ययन), साइट टेक्नोलॉजी (मानव ऊतक का अध्ययन), फार्मा, हीमोग्लोबिन के आकलन के तरीके,पीसीवी के निर्धारण के तरीके, ब्लड ग्रुप- ग्रुपिंग और

मांग

आज जिस तरह से दुनिया भर में नई-नई बीमारियां सामने आ रही हैं, उसे देखते हुए कई माइक्रोब्स (सूक्ष्म जीवाणुओं) का अब भी पता लगाया जाना बाकी है। प्रमुख संक्रामक और असंक्रामक बीमारियों खासतौर पर ट्यूबरकुलोसिस, बर्डलू, चिकुनगुनिया, रोटावायरस, टायफाइड, मलेरिया और एचपीवी के क्षेत्रों मे माइक्रोबायोलॉजिस्ट बखूबी टेस्ट करते हैं। इसलिए उनके लिए अवसरों की कमी नहीं है। इनकी गवर्नमेंट और प्राइवेट सेक्टर के हॉस्पिटल्स, लेबोरेट्रीज, फूड ऐंड बेवरेज, फार्मास्युटिकल, वॉटर प्रोसेसिंग प्लांट्स, होटल्स आदि में काफी मांग है। फार्मास्युटिकल के रिसर्च ऐंड डेवलपमेंट डिपार्टमेंट में अपॉर्च्युनिटीज की कमी नहीं है। इसके साथ ही कॉलेज या यूनिवर्सिटी में पढ़ाने का मौका भी है। कॉलेज में पढ़ाने के लिए मास्टर्स डिग्री के साथ सीएसआईआर-नेट क्वालिफाइड होना जरूरी है। जबकि डॉक्टरेट के बाद ऑप्शंस कई गुना बढ़ जाते हैं। ऐसे पेशेवरों को आमतौर पर मेडिकल लैब तकनीशियनों और प्रौद्योगिकीविदों के रूप में भर्ती किया जाता है। बीएससी माइक्रोबायोलॉजी , डीएमएलटीध एमएलटी के स्नातकोत्तर अपनी इंडिपेंडेंट लैबोरेट्री खोल सकता है। माइक्रोबायोलॉजिस्ट पूर्व आरोपण आनुवंशिक निदान, जेनेटिक स्क्रीनिंग, फोरेंसिक विज्ञान के क्षेत्र में जेनेटिक फिंगरप्रिंटिंग, जनसंख्या आनुवंशिकी सहित जीन थेरेपी (रोगाणु लाइन और दैहिक), क्लोनिंग, जेनेटिक इंजीनियरिंग के साथ कैंसर के इलाज (जीन थेरेपी का एक रूप), भ्रूण में गड़बड़ी का उपयोगी सुधार, मानव जीनोम परियोजना, मानव आनुवंशिक जैव विविधता परियोजना आदि में काफी मांग है। विदेश की बात करें, तो नासा जैसे स्पेस ऑर्गेनाइजेशन में माइक्रोबायोलॉजिस्ट की काफी डिमांड है।

क्वालिफिक्केशन

भारत की कई यूनिवर्सिटीज में माइक्रोबायोलॉजी में अंडरग्रेजुएट और पोस्टग्रेजुएट कोर्सेज उपलब्ध हैं। इसके लिए स्टूडेंट्स को फिजिक्स, केमिस्ट्री, बायोलॉजी के साथ 12वीं पास होना चाहिए। वहीं, पोस्टग्रेजुएशन करने के लिए माइक्रोबायोलॉजी या लाइफ साइंस में बैचलर्स डिग्री जरूरी है। इसके बाद वे अप्लायड माइक्रोबायोलॉजी, मेडिकल माइक्रोबायोलॉजी, क्लीनिकल रिसर्च, बायोइंफॉर्मेटिक्स, मॉलिक्यूलर बायोलॉजी, बायोकेमिस्ट्री, फोरेंसिक साइंस जैसे सब्जेक्ट्स में मास्टर्स कर सकते हैं। जो लोग स्वतंत्र रूप से रिसर्च करना चाहते हैं, वे पीएचडी करने के बाद ऐसा कर सकते हैं।

अनग्रुपिंग के तरीके, रक्त आधान, क्लिनिकल पैथोलॉजी (शरीर के तरल पदार्थ) और पैरासिटोलॉजिकल,मरीजों का रिसेप्शन, माइक्रोस्कोप- प्रकार, रक्तमूत्र की जांच मल की जांच भाग, सफाई और देखभाल, शारीरिक तरल पदार्थ की जांच, क्लिनिकल बायोकैमिस्ट्री, एंटीजन और एंटीबॉडी की परिभाषा,क्लिनिकल एंजाइमोलॉजी,कार्बोहाइड्रेट के विकार, पोषण संबंधी विकार, जिगर कार्य परीक्षण, प्रयोगशाला निदान, जैव सुरक्षा उपाय, गुणवत्ता नियंत्रण के बारे में बताया जाता है।

सैलरी

माइक्रोबायोलॉजिस्ट की सैलरी उसके स्पेशलाइजेशन पर डिपेंड करती है। शुरुआत में एक फ्रेशर 30 से 90 हजार रुपये महीना आसानी से कमा सकता है। एक्सपीरियंस और एक्सपर्टाइज के साथ सैलरी बढ़ती जाती है। इसके अलावा एक माइक्रोबायोलॉजिस्ट कुछ नया इनोवेट करने पर उसका पेटेंट करा सकता है और फिर अपने प्रोडक्ट को बेचकर लाखों रुपये कमा सकता है।

मुख्य संस्थान

- राष्ट्रीय इम्यूनोलॉजी, संस्थान, नई दिल्ली
- टाटा कैंसर संस्थान, मुंबई।
- पोस्ट ग्रेजुएट मेडिकल एवं रिसर्च संस्थान, चंडीगढ़।
- अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली।
- बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी।
- मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई।
- जेआईपीएमईआर, पांडिचेरी।
- पांडिचेरी विश्वविद्यालय, पांडिचेरी।
- आण्विक जीवविज्ञान रिसर्च इंस्टीट्यूट, एस.आर.एम. विश्वविद्यालय, कांचीपुरम, तमिलनाडु।
- एशिया पैसिफिक इंस्टिट्यूट (API), पानीपत।
- अल्फा इंजीनियरिंग कॉलेज, चेन्नई, तमिलनाडु।
- आर्यभट्ट ज्ञान विश्वविद्यालय, पटना, बिहार।
- प्रौद्योगिकी और प्रबंधन संस्थान (CUTM), भुवनेश्वर।
- देव भूमि इंस्टिट्यूट, देहरादून, उत्तराखंड।
- दिल्ली विश्वविद्यालय,, नई दिल्ली।
- बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी, वाराणसी।
- सेट जू इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिकी यूनिवर्सिटी, बंगलौर।
- वासिरेड्डी वेंकटाद्री प्रौद्योगिकी संस्थान, गुंटूर, आंध्र प्रदेश।
- श्री कृष्ण इंजीनियरिंग संस्थान, देहरादून, उत्तराखंड।
- तमिलनाडु एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी, कोयंबटूर।
- यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, कोलकाता।
- कोशिकीय व आण्विक जीवविज्ञान केंद्र,(CSIR), हैदराबाद, आंध्र प्रदेश।

goswamisanjay80@yahoo.in

वार्षिक घोषणा

समाचार पत्र का नाम	:	इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए
भाषा जिसमें प्रकाशित किया जाता है	:	हिन्दी
प्रकाशन की समयावधि	:	मासिक
प्रकाशक का नाम	:	सिद्धार्थ चतुर्वेदी
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	स्कोप कैम्पस एनएच.-12, होशंगाबाद रोड, भोपाल-47
संपादक का नाम	:	संतोष चौबे
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए, स्कोप कैम्पस एनएच.-12, होशंगाबाद रोड, भोपाल-47
मुद्रणालय जहाँ मुद्रण	:	पहले पहल प्रिंटरी 25A, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एमपी.नगर, भोपाल (म.प्र.)

उपर्युक्त समस्त जानकारी सही दी गयी है।

सिद्धार्थ चतुर्वेदी
स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक

जब आकाश से ओझल हो जाएगा मंगल!

इरफॉन ह्यूमन

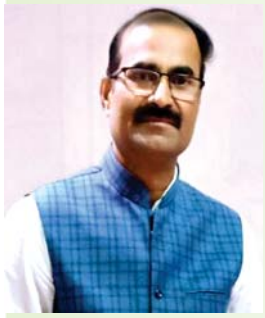

डॉ. इरफान ह्यूमन विगत पच्चीस वर्षों से 'साइंस न्यूज एण्ड व्यूज़' मासिक विज्ञान पत्रिका का संपादन व प्रकाशन कर रहे हैं। आप विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के माध्यम से देशभर में वैज्ञानिक जागरुकता के लिए प्रयासरत हैं। आपके एक हजार से अधिक लेख प्रकाशित हुए हैं, आकाशवाणी से अनेक विज्ञानवार्ताओं का प्रसारण हुआ है, विज्ञान धारावाहिक लेखन तथा विज्ञान डाक्यूमेंट्री फिल्मों के निर्माण में आपका बड़ा योगदान है। मुंबई में साइंस फिल्म फेस्टिवल आपकी फिल्में प्रदर्शित हुई हैं। विज्ञान लेखन तथा विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए आपको कई सम्मान प्राप्त हैं तथा कई वैज्ञानिक संस्थाओं के मानद हैं। वर्तमान में आप शाहजहाँपुर उ.प्र. में निवासरत हैं।

इस माह रात के आकाश में सुपरमून के दर्शन किये जा सकते हैं। 9 फरवरी को पूर्णिमा होगी और सुपरमून की घटना घटित होगी। उस समय चंद्रमा सूर्य की तरह पृथ्वी के विपरीत दिशा में स्थित होगा और चन्द्रमा पूरी तरह से रोशन होगा। यह चरण 07:34 यूटीसी पर होगा। सार्व निर्देशांकित काल (Coordinated Universal Time या Universal Time Coordinated / UTC), समय का वह प्राथमिक मानक है जिससे विश्व का समय और घड़ियाँ नियमित होतीं हैं। यह समय, शून्य अंश की देशान्तर रेखा के माध्य सौर समय के बराबर होता है (लगभग 1 सेकेण्ड के भीतर)। प्रायः ग्रीनिच माध्य समय को ही यूटीसी जैसा माना जाता हैं। इस पूर्णिमा को मूल अमेरिकी जनजातियों द्वारा पूर्ण हिम चंद्रमा के रूप में जाना जाता था क्योंकि इस वर्ष के सबसे भारी बर्फबारी होती थी। जब से शिकार करना मुश्किल होता था, इसलिए इस चंद्रमा को वहाँ आज भी पूर्ण भूख चंद्रमा के रूप में भी जाना जाता है, क्योंकि उस कठोर मौसम में शिकार मुश्किल हो जाता था।

इस खगोलीय घटना के दौरान चाँद, पृथ्वी के सबसे नजदीकी स्थिति में आ जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप पृथ्वी से चाँद सामान्य दिखने वाले आकार से अधिक बड़ा दिखाई देता है। ऐसा माना जाता है कि इस दौरान समुद्र में ज्वार (Tide) आने के साथ-साथ उन चट्टानों में भी ज्वार आता है। इस कारण भूकंप की घटना घटित हो सकती है, लेकिन इसका कोई ठोस वैज्ञानिक प्रमाण नहीं मिला है। हाँ, यह अवश्य है कि जब चन्द्रमा धरती के सबसे करीब होता है, इस कारण सबसे अधिक गुरूत्वीय खिंचाव उत्पन्न होने से यह समुद्र में उच्च ज्वार (High tide) को जन्म देता है।

पृथ्वी का चक्कर लगाते समय चन्द्रमा के नजदीकी बिंदु उपभू (Perigee) की दूरी सुपरमून वाले दिन 382,500 किलोमीटर से कम हो जाती है। उपभू चंद्रमा के दीर्घवृत्ताकार पथ (Elliptical path) पर वह बिंदु है जहाँ इसकी आकर्षण के केंद्र अर्थात् पृथ्वी के केंद्र से दूरी न्यूनतम होती है। ध्यान रहे पृथ्वी के मध्य से चन्द्रमा के मध्य तक की सामान्य दूरी 382,500 किलोमीटर या 237,700 मील होती है।

चन्द्रमा जब धरती का चक्कर लगाते हुए और अपनी कक्षा में घूमते हुए पृथ्वी के सबसे निकट आ जाता है तो यह सामान्य आकार से 14 प्रतिशत बड़ा और 30 प्रतिशत अधिक चमकदार नज़र आता है, इसे खगोलीय भाषा में "सुपरमून" कहा जाता है। साल भर में 12 से 13 बार पूर्णिमा या नए चाँद दिखने की घटना होती है, जिसमें से मात्र तीन या चार को ही सुपरमून के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। वर्ष 2020 के लिए चार सुपरमून में से 9 फरवरी को पहला सुपरमून होगा।

उच्चतम बिंदु पर बुध

10 फरवरी को बुध ग्रह (Mercury) अधिकतम पूर्वी दीर्घकरण (Greatest Eastern Elongation) पर होगा। बुध ग्रह सूर्य से 18.2 डिग्री की सबसे बड़ी पूर्वी बढ़ाव पर पहुँचता है। बुध ग्रह को देखने

समझने से प्रभावी कैंसर चिकित्सा को विकसित करने में मदद मिल सकती है। वर्तमान अध्ययन में शोधकर्ता यह पता लगा रहे हैं कि क्या माइक्रो एआरएनए में वृद्धि, कैंसर कोशिकाओं के प्रसार और आक्रमण की जाँच करके उनके ऑन्कोजेनिक गुणों को प्रभावित करती हैं या नहीं।

शोधकर्ताओं ने यह भी पता लगाया कि कैसे ये माइक्रो आरएनए, कैंसर स्टेम सेल की क्रिया को रोकते हैं। स्वस्थ स्टेम कोशिकाओं की तरह कैंसर स्टेम सेल ट्यूमर में किसी भी कोशिका में विकसित हो सकते हैं। जब यह एक ट्यूमर में मौजूद होता है, तो वे कुछ प्रोटीन का उत्पादन करके कीमोथेरेपी दवाओं को बाहर निकाल सकते हैं, जो इस प्रकार दवाओं की कार्रवाई को रोक सकते हैं। अध्ययन में पाया गया कि माइक्रोआरएनए ने इन प्रोटीनों की अभिव्यक्ति को बाधित किया, जिससे कैंसर विरोधी दवाओं को पंप करने में सक्षम कोशिकाओं की संख्या में काफी कमी आई है। इस अध्ययन को लेकर आईआईटी, कानपुर की प्राध्यापक बुशरा अतीक का कहना है कि सबसे बड़ी चुनौती यह समझ पाना थी कि कैसे एसपीआईएनके-1 को प्रदर्शित करने वाली कोशिकाओं में माइक्रोआरएनए साईलेंसिंग नियंत्रित होती हैं।

ऑस्ट्रेलिया के वाल्टर एंड एलिजा हॉल इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल रिसर्च ने दावा किया है कि उनका नया परीक्षण अंडाशय, लीवर, पेट, पैंक्रियाज, ऑसोफोगस, आंत, फेफड़ों और स्तन को प्रभावित करने वाले कैंसर का शुरुआत में ही पता लगाने में सक्षम होगा। संस्थान के एसोसिएट प्रोफेसर जेयने टाई ने कहा कि इस परीक्षण में कई ट्यूमर प्रकारों के लिए वन-स्टॉप परीक्षण बनने की संभावना है, जिसे वृहद पैमाने पर स्वीकार किया जाना चाहिए। कैंसर हो जाने पर मरीज के ज़िंदा बचने की दर सीधे इससे जुड़ी है कि परीक्षण के दौरान मरीज का कैंसर किस अवस्था में है। जितनी शुरुआती अवस्था में कैंसर का पता चलता है, मरीज़ के बचने की दर भी उतनी ही अधिक होती है। इसका मतलब यह है कि वर्तमान में ऐसे रक्त परीक्षण की अत्यंत ज़रूरत है, जो शुरुआती अवस्था में ही कैंसर की सटीकता से पता लगा सकें। नए रक्त परीक्षण के बारे में साइंस जर्नल में जानकारी प्रकाशित हुई है।

कैंसर और मस्तिष्काघात में संबंध अमेरिका की पेंसिल्वेनिया स्टेट यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने नेशनल कैंसर इंस्टीट्यूट् के सर्विलांस, एपिडेमिओलॉजी और एंड रिजल्ट प्रोग्राम (सीर) से डाटा एकत्र अध्ययन किया है कि जो लोग कैंसर का शिकार हैं या कैंसर का इलाज करा चुके हैं, उनमें आम लोगों के मुकाबले मस्तिष्काघात से मरने की संभावना अधिक होती है। अध्ययन में उन 70 लाख से अधिक रोगियों के डाटा का ऑकलन किया गया, जिनमें बीमारी के घातक रूपों की पहचान हुई थी। इसमें अमेरिका की लगभग 28 प्रतिशत आबादी के कैंसर के मामले, उनके जीवित बचने, उपचार, उम्र और रोग के वर्ष की जानकारी शामिल थी। इस अध्ययन से पता चला है कि जिन लोगों को कैंसर है या कैंसर के इलाज के बाद जीवित हैं, उनमें मस्तिष्काघात से जान जाने का ख़तरा दो गुना से अधिक है। यह अध्ययन नेचर कम्युनिकेशंस नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ है।

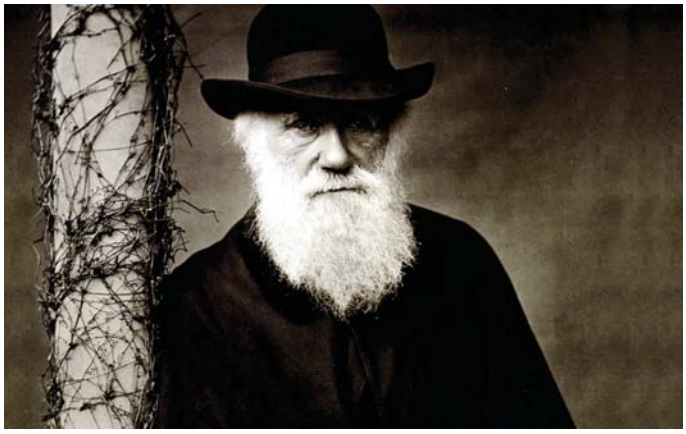

चार्ल्स डार्विन प्राकृतिक वरण

हम जानते हैं कि प्राकृतिक वरण (Natural selection) ही क्रम-विकास (Evolution) की प्रमुख कार्यविधि है। जिसकी नींव चार्ल्स डार्विन ने रखी थी। प्राकृतिक वरण तंत्र विशेष रूप से इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह एक प्रजाति को पर्यावरण के लिए अनुकूल बनने मे सहायता करता है। प्राकृतिक चयन का सिद्धांत इसकी व्याख्या कर सकता है कि पर्यावरण किस प्रकार प्रजातियों और जनसंख्या के विकास को प्रभावित करता है ताकि वो सबसे उपयुक्त लक्षणों का चयन कर सकें। यही विकास के सिद्धांत का मूलभूत पहलू है। प्राकृतिक चयन का अर्थ उन गुणों से है जो किसी प्रजाति को बचे रहने और प्रजनन मे सहायता करते हैं और इसकी आवृत्ति पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ती रहती है। 12 फ़रवरी को डार्विन दिवस (Darwin Day) मनाया जाता है। उनका जन्म 12 फरवरी, 1809 को हुआ था। इस दिवस का उद्देश्य विज्ञान में डार्विन के योगदान स्पष्ट करने और सामान्य तौर पर विज्ञान को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है।

देखा जाए तो आज जो हम सजीव चीजें देखते हैं, डार्विन की उत्पत्ति तथा विविधता को समझने के लिए उनका विकास का सिद्धान्त सर्वश्रेष्ठ माध्यम बन चुका है। उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध पुस्तक जीवजाति का उद्भव (Origin of Species) प्रजातियों की उत्पत्ति सामान्य पाठकों पर केंद्रित थी। डार्विन के विकास के सिद्धान्त से यह समझने में मदद मिलती है कि किस प्रकार विभिन्न प्रजातियां एक दूसरे के साथ जुडी हुई हैं। स्वस्थतम की उत्तरजीविता (survival of fittest) एक वाक्यांश है जिसका इस्तेमाल आम तौर पर इसके प्रथम दो प्रस्तावकों ब्रिटिश दार्शनिक हरबर्ट स्पेंसर और चार्ल्स डार्विन, द्वारा इस्तेमाल किए गए सन्दर्भ के अलावा अन्य सन्दर्भों में भी किया जाता है। हरबर्ट स्पेंसर ने सबसे पहले इस वाक्यांश का इस्तेमाल चार्ल्स डार्विन की ''ऑन द

का यह सबसे अच्छा समय है क्योंकि सांय आकाश में क्षितिज के ऊपर अपने उच्चतम बिंदु पर होगा। सूर्यास्त के बाद पश्चिमी आकाश में बुध ग्रह को नीचे देखा जा सकता है। बुध, सौरमंडल के आठ ग्रहों में सबसे छोटा और सूर्य से निकटतम ग्रह है। इसका परिक्रमण काल लगभग 88 दिन है। पृथ्वी से देखने पर, यह अपनी कक्षा के ईर्द-गिर्द 116 दिवसों में घूमता नज़र आता है जो कि ग्रहों में सबसे तेज़ है। बुध को सूर्यास्त के बाद या सूर्योदय से ठीक पहले नग्न आंखो से देखा जा सकता है।

मंगल प्रच्छादन

18 फरवरी चंद्रमा मंगल ग्रह के सामने से गुज़रेगा। ग्रहण के समान ही इस दुर्लभ घटना में चंद्रमा पृथ्वी और मंगल के बीच सीधे गुजरेगा। इस घटना को मंगल प्रच्छादन (Mars occultation) के रूप में जाना जाता है। उत्तरी अमेरिका के अधिकांश क्षेत्रों में दक्षिण-पूर्वी आकाश में सूर्योदय से ठीक पहले चंद्रमा के पीछे से मंगल को गायब होते देखा जा सकता है। दूसरी तरफ दो घंटे से अधिक बाद फिर से दिखाई देगा। इसे दिखाई देने वाला सटीक समय स्थान-स्थान पर भिन्न-भिन्न हो सकता है।

इतिहास में विज्ञान

1 फरवरी, 1951 को विज्ञान के इतिहास में पहली बार परमाणु विस्फोट का टीवी स्टेशन केटीएलए से प्रसारण टेलीविजन पर सार्वजनिक रूप से देखा गया था। इस घटना को फ्रेंच विल्सन, नेवादा में परीक्षण विस्फोट से 300 मील दूर माउंट विल्सन पर एक एनबीसी कैमरा द्वारा छायांकित किया गया था।

इसी दिन 1972 में, पहला वैज्ञानिक हस्तचलित कैलक्यूलेटर हेवलेट-पैकार्ड द्वारा पेश किया गया था, जिसका नाम 35 कुंजी पर एचपी-35 रखा गया था। यह पहला ऐसा हस्त चलित कैलक्यूलेटर था जो एक कीस्ट्रोक के साथ लॉगरिदमिक और त्रिकोणमितीय कार्यों को करने में सक्षम था। लाल एलईडी डिस्प्ले 10 अंक मंथिसा और 2 अंकों के एक्सपोनेंट तक वैज्ञानिक नोटेशन दे सकता है। फरवरी 1975 तक (जब मॉडल का उत्पादन बंद कर दिया गया था), 300,000 कैलक्यूलेटर बेचे गए थे। गणनाओं के लिए संख्याओं और कार्यों को रिवर्स पोलिश नोटेशन में दर्ज किया गया था, जिसने एन्टर कुंजी का उपयोग किया। यह रिचार्जेबल बैटरी पर चलता था।

1 फरवरी, 1844 को जन्मे जर्मन वनस्पतिशास्त्री और प्लांट साइटोलॉजिस्ट, जिन्होंने जिमनोस्पर्म (जैसे शंकुधारी) और एंजियोस्पर्म (फूल वाले पौधे) में भ्रूण की थैली का सटीक वर्णन किया, साथ ही एंजियोस्पर्म में दोहरे निषेचन (double-fertilization) का प्रदर्शन किया। उन्होंने बताया कि नई कोशिका नाभिक केवल अन्य नाभिक के विभाजन से परिणाम कर सकती है और यह दर्शाती है कि शुक्राणु और अंडे में शरीर की कोशिकाओं में पाए जाने वाले गुणसूत्रों की संख्या आधी होती है। उन्होंने नाभिक में पाए जाने वाले तरल पदार्थ के लिए कोशिका और न्यूक्लियोप्लाज्म (1882) में पाए गए तरल पदार्थ के लिए कोशिका द्रव्य शब्द गढ़ा।

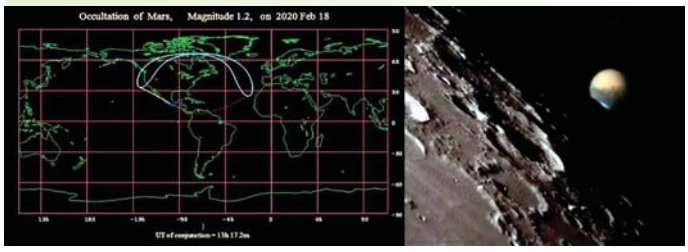

कैंसर और मस्तिष्काघात में संबंध

कैंसर, बीमारियों का एक समूह है जिसमें कोशिकाओं में असामान्य वृद्धि होती है और यह शरीर के अन्य भागों में फैल सकती है। लेकिन, क्या आप जानते हैं कि एक कैंसर ग्रस्त ऊतक के अंदर सभी कोशिकाएँ समान नहीं होती हैं? वे अपने आकार, आकृति और कार्य में भिन्न होती हैं जो प्रभावी ढंग से इलाज करने के लिए चुनौती देती हैं। कैंसर जिनोम के अध्ययन में शोधकर्ताओं की अंतर्राष्ट्रीय टीम कैंसर को जन्म देने वाले बदलावों को समझने की कोशिश कर रही है कि कैंसर को उत्पन्न करने वाली अन्य आनुवंशिक असामान्यताएं डीएनए प्रतिकृति में त्रुटि के कारण हो सकती हैं या आनुवंशिक रूप से प्राप्त हो सकती हैं। कैंसर के बहुत सारे रूप हैं लेकिन उनके कारणों का पता अब भी नहीं है। कैंसर के प्रति जागरूकता के लिए 4 फ़रवरी को विश्व कर्कट अर्थात कैंसर दिवस (World Cancer Day) मनाया जाता है। 1933 में अंतर्राष्ट्रीय कैंसर नियंत्रण संघ ने स्विट्जरलैंड में जिनेवा में पहली बार विश्व कैंसर दिवस मनाया था।

हाल ही में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), कानपुर के शोधकर्ताओं ने एसपीआईएनके-1 के स्तरों को विनियमित करने में विशिष्ट माइक्रोआरएनए की भूमिका स्थापित की है। माइक्रोआरएनए (microRNA) छोटे आरएनए अणु होते हैं जो प्रोटीन में रूपांतरण को रोकने के लिए कुछ वाहक आरएनए को लक्षित करते हैं। वे प्रोटीन संश्लेषण और जीन विनियमन में एक आवश्यक भूमिका निभाते हैं जो कभी-कभी कई प्रकार की बीमारियों का कारण बन सकता है। क्लिनिकल कैंसर रिसर्च नामक पत्रिका में प्रकाशित अपने अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने प्रदर्शित किया है कि इन माइक्रोआरएनए के स्तर में वृद्धि से प्रोस्टेट कैंसर की प्रगति कम हो जाती है। इस शोध को वेलकम ट्रस्ट डीबीटी इंडिया एलायंस द्वारा वित्त पोषित किया गया था।

शोधकर्ताओं ने प्रयोगात्मक रूप से एंटी-माइक्रोआरएनए अणुओं को कोशिकाओं में मिलाया, जिसके परिणाम स्वरूप माइक्रो आरएनए में सार्थक कमी हुई। फिर उन्होंने एसपीआईएनके-1 के स्तर को मापा और इसे उच्च पाया, जिससे साबित हुआ कि माइक्रोआरएनए ने वास्तव में एसपीआईएनके-1 को विनियमित किया है। स्वस्थ कोशिकाओं के विपरीत, कैंसर कोशकाएँ अनियंत्रित रूप से बढ़ती हैं और अन्य ऊतकों पर हमला करती हैं, इससे वे दूसरे ऊतकों पर पनप सकती हैं। इसके गुणों के पीछे के तंत्र, जिसे ऑन्कोजेनिक गुण कहा जाता है, को

ऑरिजिन ऑफ स्पीशीज़'' को पढ़ने के बाद अपनी प्रिंसिपल्स ऑफ बायोलॉजी (1864) में किया था, जिसमें उन्होंने अपने आर्थिक सिद्धांतों और डार्विन के जैविक सिद्धांतों के बीच समानताएं व्यक्त करते हुए लिखा कि यह स्वस्थतम की उत्तरजीविता है। डार्विन ने स्पेंसर के नए वाक्यांश ''स्वस्थतम की उत्तरजीविता'' का इस्तेमाल सबसे पहले वर्ष 1869 में प्रकाशित किए गए ''ऑन द ऑरिजिन ऑफ स्पीशीज़'' के पांचवें संस्करण में ''प्राकृतिक चयन'' के एक समानार्थी शब्द के रूप में किया था। डार्विन ने इसका मतलब ''तत्काल, स्थानीय पर्यावरण के लिए बेहतर अनुकूलित'' के लिए एक रूपक के रूप में किया था।

आनुवंशिकी भी हर कदम पर डार्विन की ही पुष्टि करती दिखती है। जेम्स वॉटसन और फ्रांसिस क्रिक ने वर्ष 1953 मे एक ऐसी खोज की, जिससे चार्ल्स डार्विन द्वारा प्रतिपादित अधिकतर सिद्धांतों की पुष्टि होती है। उन्होंने जीवधारियों के भावी विकास के उस नक्शे को पढ़ने का रासायनिक कोड जान लिया था, जो हर जीवधारी अपनी हर कोशिका में लिये घूमता है। यह नक्शा केवल चार अक्षरों वाले डीएनए कोड के रूप में होता है। अपनी खोज के लिए वर्ष 1962 में दोनो को चिकित्सा विज्ञान का नोबेल पुरस्कार मिला।

आम आदमी का रेडियो

एक ज़माना था जब खेती से लेकर देश दुनिया की खबरों और मनोरंजन का मुख्य माध्यम रेडियो था और समाचार सुनने के लिए लोग दूसरों के यहां जाते थे। बीबीसी की हिंदी सेवाएं, वॉयस आफ अमेरिका, रेडियो डायचे वेले जैसी विदेशी समाचार सेवाओं के अलावा आकाशवाणी की दर्जनों सेवाओं का रेडियो के माध्यम से जो उत्साह दो दशक पहले जनमानस में था वह टेलीविजन चौनलों के आने के बाद विलुप्त होने की कगार पर आ गया, लेकिन एफएम रेडियो ने रेडियो को एक नयी संजीवनी दी। यही नहीं रेडियो पर प्रधानमंत्री के रेडियो पर मन की बात कार्यक्रम की लोकप्रियता का असर अब गाँवों में भी दिखने लगा है। लोग चौपालों में समूहों में बैठकर ''मन की बात'' कार्यक्रम सुनते देखे जा सकते हैं। 13 फ़रवरी को विश्व रेडियो दिवस (World Radio Day) के रूप में मनाया जाता है। रेडियो दिवस एक ऐसा अवसर है कि हम रेडियो के द्वारा हमारे जीवन में लाए गए बदलावों को याद करें। सामाजिक परिवर्तनों में भी रेडिया अहम रहा है। कई देशों में रेडियों बदलाव के पड़ावों का साक्षी भी रहा है। वर्ष 1923 में रेडियो क्लब ऑफ बॉम्बे (बॉम्बे की मंडली) से प्रसारण शुरू हुआ था। ऑल इंडिया रेडियो और फिर आकाशवाणी के ज़रिये रेडियो ने देश में अपनी महत्वपूर्ण जगह बनाई है।

रेडियो के इतिहास पर नज़र डालने पर पता चलता है कि ब्रिटेन में बीबीसी और अमेरीका में सीबीएस और एनबीसी जैसे सरकारी रेडियो स्टेशनों की शुरुआत हुई। अमेरीका के पिट्सबर्ग में वर्ष 1920 में पहला रेडियो स्टेशन (केंद्र) खोला गया। भारत में वर्ष 1936 में भारत में 'इम्पेरियल रेडियो ऑफ इंडिया' की शुरुआत हुई जो आजादी के बाद ऑल इंडिया रेडियो या आकाशवाणी बन गया। वर्ष 1947 में आकाशवाणी के पास छह रेडियो स्टेशन थे और पहुँच 11 प्रतिशत लोगों तक ही थी, लेकिन आज देश की अधिकतम आबादी तक रेडियो की पहुंच हैं। आज देश में एफएम रेडिया धूम मचा रहा है। रेडियो प्रसारण की बात की जाए तो इस दिशा में वैज्ञानिक मारकोनी के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता, जिन्होंने वर्ष 1894 में पहला पूर्ण टेलीग्राफी सिस्टम बनाया, जिसे रेडियो कहा गया। रेडिया का विज्ञान प्रसार के साथ सेना एवं नौसेना में भी सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया गया।

यह दिवस रेडियो के अनूठी शक्ति को याद रखने और इसे दुनिया के हर कोने लोकप्रिय बनाने के लिए मूल रूप से स्पेन ऑफ किंगडम द्वारा प्रस्तावित होने के बाद यह यूनेस्को के 36 वें जनरल सम्मेलन में 3 नवंबर, 2011 को घोषित किया गया था। वर्ष 2012 में विश्व रेडियो दिवस के पहले संस्करण के सम्मान में, लाइफलाइन एनर्जी, फ्रंटलाइन एसएमएस, एसओएएस रेडियो और एम्पावरहाउस ने लंदन में एक सेमिनार का आयोजन किया। इतालडियो और इंजीनियरिंग और दूरसंचार संकाय द्वारा इस आयोजन का आयोजन किया गया था। 20 वीं शताब्दी के शुरुआती वर्षों में मार्कोनी द्वारा निर्मित इंटरकांटिनेंटल रेडियो स्टेशन की मेजबानी करने वाले पिसा को पहली इटैलियन शहर के रूप में चुना गया। आज भले ही हमारी जीवनशैली में टीवी से लेकर सोशल मीडिया का हस्तक्षेप बढ़ गया है लेकिन भारत में ''यह आकाशवाणी है'' वाक्य आज भी लोगों के मन-मस्तिष्क में धुलामिला है।

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस

सर सी.वी. रमन को कौन नहीं जानता। जब रमन की बात आती है तो रमन प्रभाव को भी जानना चाहिए। रमन प्रभाव (Raman effect) वह है जिसमें एकल तरंग-दैर्ध्य प्रकाश (मोनोक्रोमेटिक) किरणें, जब किसी पारदर्शक माध्यम ठोस, द्रव या गैस से गुजरती है तब इसकी छितराई किरणों का अध्ययन करने पर पता चला कि मूल प्रकाश की किरणों के अलावा स्थिर अंतर पर बहुत कमजोर तीव्रता की किरणें भी उपस्थित होती हैं। इन्हीं किरणों को रमन-किरण भी कहते हैं। यह किरणें माध्यम के कणों के कंपन एवं घूर्णन की वजह से मूल प्रकाश की किरणों में ऊर्जा में लाभ या हानि के होने से उत्पन्न होती हैं। रमन प्रभाव का अनुसंधान की अन्य शाखाओं, औषधि विज्ञान, जीव विज्ञान, भौतिक विज्ञान, खगोल विज्ञान तथा दूरसंचार के क्षेत्र में भी बहुत महत्व है। 28 फरवरी, 1928 को सर सी.वी. रमन ने अपनी खोज रमन प्रभाव की घोषणा की थी। इसी

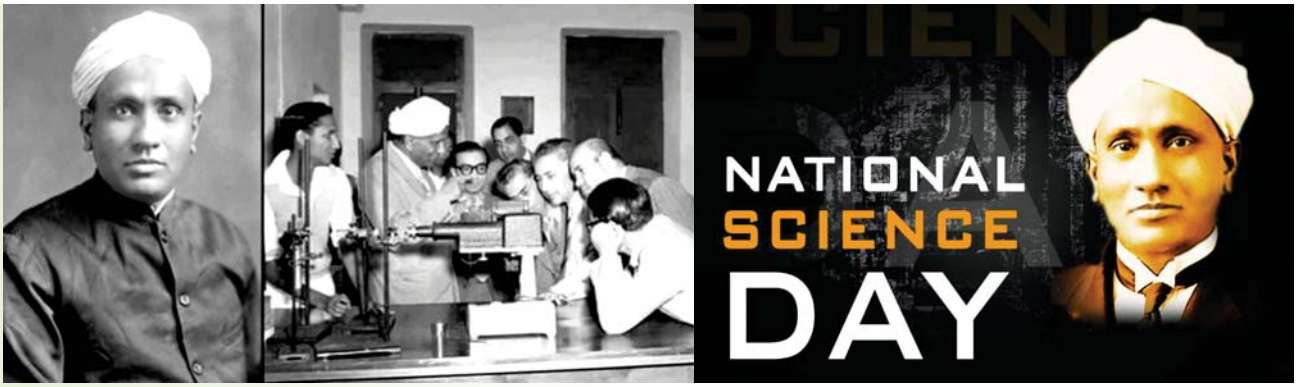

खोज (प्रकाश के प्रकीर्णन पर उत्कृष्ट कार्य के लिये) उन्हें वर्ष 1930 में भौतिकी का प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार दिया गया। आज उनका आविष्कार उनके ही नाम, रामन प्रभाव के नाम से जाना जाता है। वर्ष 1954 में उन्हें भारत सरकार द्वारा भारत रत्न की उपाधि से विभूषित किया गया और वर्ष 1957 में लेनिन शान्ति पुरस्कार से नवाज़ा गया था। इससे पूर्व आप वर्ष 1924 में अनुसंधानों के लिए रॉयल सोसायटी, लंदन के फैलो भी बनाए गए। उनकी इसी खोज दिवस (28 फ़रवरी) को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस (National Science Day) के रूप में मनाया जाता है।

सर सीवी रमन और रमन प्रभाव की चर्चा करने से पहले आइए उनके कार्यों पर डालते हैं एक नज़र। कलकत्ता विश्वविद्यालय में वर्ष 1917 में भौतिकी के प्राध्यापक का पद बना तो वहाँ के कुलपति आशुतोष मुखर्जी ने उसे स्वीकार करने के लिए सर सीवी रमन को आमंत्रित किया। सर सीवी रमन ने उनका निमंत्रण स्वीकार करके उच्च सरकारी पद से त्याग-पत्र दे दिया। उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय में कुछ वर्षों में वस्तुओं में प्रकाश के चलने का अध्ययन किया। उन्होंने अध्ययन किया कि किरणों का पूर्ण समूह बिल्कुल सीधा नहीं चलता है और उसका कुछ भाग अपनी राह बदलकर बिखर जाता है। वर्ष 1921 में सर सीवी रमन विश्वविद्यालयों की कांग्रेस में प्रतिनिधि बन गए आक्सफोर्ड गए। वहां जब अन्य प्रतिनिधि लंदन में दर्शनीय वस्तुओं को देख अपना मनोरंजन कर रहे थे, वह सेंट पाल के गिरजाघर में उसके फुसफुसाते गलियारों का रहस्य समझने में लगे हुए थे। जब वह जलयान से स्वदेश लौट रहे थे, तो आपने भूमध्य सागर के जल में उसका अनोखा नीला व दूधियापन देखा। कलकत्ता विश्वविद्यालय पहुँच कर आपने वस्तुओं में प्रकाश के बिखरने का नियमित अध्ययन शुरु कर दिया। इसके माध्यम से लगभग सात वर्ष उपरांत, आप अपनी उस खोज पर पहुँचें, जो रामन प्रभाव के नाम से विख्यात है। उनका ध्यान वर्ष 1927 में इस बात पर गया कि जब एक्स किरणें प्रकीर्ण होती हैं, तो उनकी तरंग लम्बाइयां बदल जाती हैं। तब प्रश्न उठा कि साधारण प्रकाश में भी ऐसा क्यों नहीं होना चाहिए?

सर सी.वी. रमन ने पारद आर्क के प्रकाश का स्पेक्ट्रम स्पेक्ट्रोस्कोप में निर्मित किया। इन दोनों के मध्य विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थ रखे तथा पारद आर्क के प्रकाश को उनमें से गुजार कर स्पेक्ट्रम बनाए। आपने देखा कि हर एक स्पेक्ट्रम में अन्तर पड़ता है। हर एक पदार्थ अपनी-अपनी प्रकार का अन्तर डालता है। तब श्रेष्ठ स्पेक्ट्रम चित्र तैयार किए गए, उन्हें मापकर तथा गणितीय गणना करके उनकी सैद्धान्तिक व्याख्या की। उन्होंने प्रमाणित किया गया कि यह अन्तर पारद प्रकाश की तरगं लम्बाइयों में परिवर्तित होने के कारण पड़ता है। इस प्रकार रमन प्रभाव का उद्‌भव सम्भव हुआ। उन्होंने इस खोज की घोषणा 29 फरवरी, 1928 को की थी, जिसे आज हम राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रूप में मनाते हैं।

आज रमन प्रभाव ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को बदल दिया है और हर क्षेत्र के वैज्ञानिक रामन प्रभाव के माध्यम से महत्वपूर्ण वैज्ञानिक प्रयोगों को अंजाम दे रहे हैं। इसके चलते बैक्टीरिया, रासायनिक प्रदूषण और विस्फोटक वस्तुओं आदि का पता आसानी से चल जाता है। आजकल अमेरिकी वैज्ञानिकों ने इसे सिलिकॉन पर भी इस्तेमाल करना आरंभ कर दिया है। ज्ञात रहे ग्लास की अपेक्षा सिलिकॉन पर रामन प्रभाव दस हज़ार गुना ज़्यादा तीव्रता से काम करता है। इससे आर्थिक लाभ तो होता ही है साथ में समय की भी काफी बचत हो सकती है। वैज्ञानिक विकास के साथ आने वाले समय में रमन प्रभाव के और भी उपयोग दृष्टिगोचर हो सकते हैं।

research.org@rediffmail.com

राम शरण दास 2 अप्रैल 1944 को मुजफ्फरनगर मे जन्में। मेरठ विश्वविद्यालय से एम.एस-सी एवं दिल्ली विश्वविद्यालय से बी.एड. और एम.एड. किया। सीबीएसई, एनसीईआरटी, एनआईओएस तथा इग्नू के लिये आपने विज्ञान पुस्तकों का लेखन किया। विज्ञान लेखन के अतिरिक्त आपने अनुवाद के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किये हैं। व्हिट्टेकर पुरस्कार, राजीव गांधी राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक लेखन पुरस्कार आदि से सम्मानित रामशरण दास ने कई विश्व प्रसिद्ध विज्ञान कथाओं तथा उपन्यासों का संक्षिप्तिकरण किया। उक्त पुस्तक का उद्‌देश्य उभरते युवा मस्तिष्कों को वैज्ञानिकों, विज्ञान-विधियों, वैज्ञानिक आविष्कारों औरउनके समाज पर प्रभावों आदि के विषय में और अधिक अध्ययन करने की प्रेरणा देना है जिससे वे वैज्ञानिक ज्ञान संपन्न समाज के निर्माण के लिए संकल्प लें।

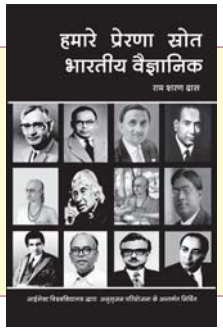

आईसेक्ट पब्लिकेशन

हिन्दी में विज्ञान की लोकप्रिय किताबें

क्र	किताब	लेखक	मूल्य
1	खनिज और मानव	डॉ. विजय कुमार उपाध्याय	195/–
2	भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम	श्री कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	195/–
3	जल संरक्षण	डॉ. डी. डी. ओझा	195/–
4	भूमि संरक्षण	डॉ. दिनेश मणि	95/–
5	बच्चों के लिए विज्ञान मॉडल	श्री बृजेश दीक्षित	95/–
6	वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत	सुश्री संगीता चतुर्वेदी	95/–
7	प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिंतन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	95/–
8	इलेक्ट्रॉनिक आधारित सामरिक सुरक्षा तकनीक	डॉ. मनमोहन बाला	95/–
9	जैव विविधता संरक्षण	डॉ.मनीष मोहन गोरे	95/–
10	दूर संचार	श्री संतोष शुक्ला	150/–
11	घर–घर में विज्ञान	डॉ. के. एम. जैन	150/–
12	भौतिकी की विकास यात्रा	डॉ. के. एम. जैन	150/–
13	नैनोटेक्नॉलॉजी	डॉ. पी. के. मुखर्जी	95/–
14	हमारे जीवन में अंतरिक्ष	कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	195/–
15	वैश्विक तापन	डॉ. दिनेश मणि	95/–
16	ई–वेस्ट प्रबंधन	श्री संतोष शुक्ला	150/–
17	लेसर लाईट	डॉ. पी. के. मुखर्जी	150/–
18	न्यूक्लियर एनर्जी	डॉ. अनुज सिन्हा	95/–
19	न्यूट्रिनों की दुनिया	डॉ. के. एम. जैन	95/–
20	भोजवैटलैंड : भोपाल ताल	श्री राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर'	195/–
21	महासागर बोलते हैं	श्री बजरंगलाल जेठू	250/–
22	महासागर : जीवन के आधार	श्री नवनीत कुमार गुप्ता	195/–
23	ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति	श्री महेन्द्र कुमार माथुर	195/–
24	सूक्ष्म जीव विज्ञान	डॉ. पंकज श्रीवास्तव एवं श्रीमती तोषी जैन	195/–
25	भारत में विज्ञान एवं विज्ञान संचार की परंपरा	श्री विश्वमोहन तिवारी	195/–
26	सेहत और हम	डॉ. मनीष मोहन गोरे	195/–
27	रसोई विज्ञान	पुनीता मल्होत्रा	95/–
28	ह्यूमन ट्रांसमिशन एवं अन्य विज्ञान कथाएं	डॉ. ज़ाकिर अली रजनीश	150/–
29	बायोइंफार्मेटिक्स	डॉ. अर्चना पांडेय	150/–
30	हमारे प्रेरणा स्रोत भारतीय वैज्ञानिक	राम शरण दास	195/–
31	मध्यप्रदेश की विज्ञान संचार यात्रा	चक्रेश जैन	95/–
32	हिन्दी विज्ञान लेखनः भूत, वर्तमान एवं भविष्य	डॉ. शिव गोपाल मिश्रा	195/–
33	दैनिक जीवन में रसायन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	195/–
34	जलवायु परिवर्तन	डॉ. दिनेश मणि	195/–
35	ग्रीन बेबी	श्री विजय चितौरी	195/–
36	फोरेन्सिक साइंस	डॉ. पंकज श्रीवास्तव	195/–
37	सर्वशास्त्र शिरोमणि गणित	डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्रा	195/–
38	ऊतक संवर्धन	श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव	195/–
39	आइए लिनक्स सीखें	श्री रविशंकर श्रीवास्तव	250/–
40	हम क्या समझते हैं?	श्री प्रदीप श्रीवास्तव	95/–
41	सौन्दर्य प्रसाधनों का रसायन विज्ञान	डॉ. बबिता अग्रवाल	195/–
42	प्रदूषण जनित रोग	डॉ. सुनंदा दास	195/–
43	भोपाल के पक्षी	डॉ. स्वाति तिवारी	395/–
44	पर्यावरण और मानव जीवन	डॉ. सुमन गुप्ता	195/–